समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार का मासिक

उत्तर प्रदेश

अप्रैल, 2026, वर्ष 50

अन्तरिक्ष

₹ 15/-

वीरों की हुंकार

–डॉ. सुयश मिश्रा

वीरों भर हुंकार, रण में कूद पड़ो।
माटी रही पुकार, रण में कूद पड़ो।।
उठो जवानों, उठो जवानों, उठो जवान उठो ...2
वीरों भर हुंकार, रण में कूद पड़ो,
माटी रही पुकार, रण में कूद पड़ो।।
चंडी बन तुम इन पर टूटो,
बन काली संहार करो।
तरकस तीर कमान संभालो,
मिलजुल कर अब वार करो।
दिल में धधकती ज्वार, रण में कूद पड़ो।
माटी रही पुकार , रण में कूद पड़ो।
उठो जवानों, उठो जवानों, उठो जवान उठो ...2
वीरो भर हुंकार, रण में कूद पड़ो,
माटी रही पुकार, रण में कूद पड़ो।
नहीं झुकेंगे,नहीं सहेंगे,
मज़हब जाति में नहीं बंटेंगे।
स्वाभिमान की ज्योति जलाकर
फिर से नया इतिहास रचेंगे
छोड़ चलो घर द्वार, रण में कूद पड़ो।
माटी रही पुकार, रण में कूद पड़ो।
उठो जवानों, उठो जवानों, उठो जवान उठो ...2
वीरों भर हुंकार रण में कूद पड़ो,
माटी रही पुकार रण में कूद पड़ो।

◆

पता : केशव नगर द्वितीय, लखनऊ
मो. : 8924856004

उत्तर प्रदेश

❑ वर्ष–50 ❑ अंक–86
❑ अप्रैल, 2026

अनुक्रम

स्मृति शेष

- गीत–संगीत की आशा ❑ निर्मला डोसी / 3

लेख

- रश्मिरथी पर्व के बहाने राष्ट्रभक्ति के तराने ❑ सियाराम पांडेय 'शांत' / 8

कहानियाँ

- डायरी का पन्ना ❑ अंजु त्रिपाठी / 11
- केंचुआ ❑ डॉ. सुषमा गुप्ता / 15
- जाना जरुरी है क्या....! ❑ डॉ. रंजना जायसवाल / 19

कविताएँ

- वीरों की हुकांर ❑ डॉ. सुयश मिश्रा / आवरण–2
- फादर्स डे ❑ अशोक 'अंजुम' / आवरण–3
- बेटी के अरमान ❑ रविन्द्र सिंह पंवार / 24
- चांद बालियाँ ❑ आशिया अफरोज / 25
- फूलों का राजकुमार ❑ अमित कुमार / 26
- कवितायें ❑ डॉ. रविशंकर पांडेय / 27

पुस्तक समीक्षा

- हरी चींटियाँ सपना देखती हैं ❑ सूर्यकांत शर्मा / 29

संरक्षक एवं मार्गदर्शक : ❑ **संजय प्रसाद**
अपर मुख्य सचिव, सूचना

प्रकाशक एवं स्वत्वाधिकारी : ❑ **विशाल सिंह**
सूचना निदेशक, उत्तर प्रदेश

❑ **अरविन्द कुमार मिश्र**
अपर निदेशक, सूचना

❑ **चन्द्र विजय वर्मा**
सहा. निदेशक (प्रकाशन)

उप सम्पादक सूचना : ❑ **दिनेश कुमार गुप्ता**

सहयोग : ❑ **अजय कुमार द्विवेदी**
सहयुक्त सम्पादक

भीतरी रेखांकन : **अवधेश मिश्रा, अंतरिक्ष**

सम्पादकीय संपर्क : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, पं. दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
ईमेल : **upmasik@gmail.com**

दूरभाष : कार्यालय : ई.पी.ए.बी.एक्स 0522–2239132–33, 9412674759, 7705800978

पत्रिका information.up.nic.in वेबसाइट पर उपलब्ध है।

❑ **एक प्रति का मूल्य** : पंद्रह रुपये
❑ **वार्षिक सदस्यता** : एक सौ अस्सी रुपये
❑ **द्विवार्षिक सदस्यता** : तीन सौ साठ रूपये
❑ **त्रैवार्षिक सदस्यता** : पांच सौ चालीस रुपये

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे मासिक पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
–सम्पादक

आवर्तन

साहित्य चाहे जिस किसी विधा में लिखा जाए, उसकी उपादेयता जनता जनार्दन के व्यापक हित में ही है। साहित्य केवल भारी–भरकम शब्दों का प्रयोग भर नहीं है बल्कि वह आम आदमी को शिक्षित–प्रशिक्षित करने का माध्यम भी है। साहित्य अगर जीवंत विद्रोह है तो वह समालोचना का आगार भी है। उसमें लोक की चिंता, वर्तमान के प्रति सजगता सकारात्मक उपयोग और भविष्य की व्यापक दृष्टि समाहित होती है संसार में हर व्यक्ति के पास अच्छे विचार होते हैं, सवाल यह है कि वह उनका प्रयोग किस तरह करता है। व्यक्ति के मन में विचारों का प्रवाह निरंतर उठता रहता है। समुद्र की लहरों की तरह विचारों का आना–जाना लगा रहता है। विचार जिस तेजी के साथ मन–मस्तिष्क में कौंधते हैं, उसी गति के साथ सद्य तिरोहित भी हो जाते हैं। ऐसे में जो रचनाधर्मी त्वरित गति से विचारों को पकड़ने और उसे कागज पर उतार लेने में सफल होता है, वही कालजयी साहित्यकार कहलाने का गौरव हासिल करता है। वर्ष के 12 महीनों में वैसे तो कोई भी हल्के में लेने योग्य नहीं है किसी भी महीने को कमतर आंकना वह भी साहित्यकार की दृष्टि से न तो उचित है और न ही समीचीन।

अप्रैल माह तो वैसे भी बेहद शानदार महीना है, इसमें भारतीय नवसंवत्सर हैं लेकिन पाश्चात्य संस्कृति में यकीन रखने वालों ने इस माह के प्रथम दिवस को ही मूर्ख दिवस निरूपित कर भारतीय संस्कृति–सभ्यता को ही सिरे से नकारने की कोशिश की और विडंबना इस बात की है कि हम साहित्यकार हर साल मूर्ख बनने में अपने को गौरवान्वित महसूस करते हैं। यह प्रवृत्ति हमें कहां ले जाएगी, इस पर विचार आवश्यक है इस बार अप्रैल माह में उत्तर प्रदेश में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर की कालजयी कृति रश्मिरथी के 75 साल पूरे होने पर 'रश्मिरथी पर्व' का आयोजन किया गया। यह अगर साहित्य की बड़ी उपलब्धि रही तो तो आशा भोंसले का जाना अंदर तक झकझोर गया। प्रख्यात गायिका आशा भोंसले ने 12 अप्रैल को अपनी इहलीला समाप्त की। इस महाप्रयाण को यह देश कभी भूल नहीं पाएगा। हनुमान जन्मोत्सव, गुड फ्राइडे, ईस्टर जलियांवाला बाग कांड की नव वर्ष जैसे आयोजन देश को जीवंत और जागृत तो बनाते ही हैं, हमें अपनी संस्कृति–सभ्यता, व्यक्तित्व और कृतित्व को लेकर निरंतर सचेष्ट और जागरूक भी करते हैं। 'उत्तर प्रदेश' हिन्दी मासिक हर माह नये–नये संदर्भों कथा–कहानियों के साथ कविताओं, संस्मरणों के साथ आपके भाव प्रस्तुत होते हैं। इस बार के अंक में भी हमने आपकी भावनाओं और रुचियों का विशेष ख्याल रखा है। इस अंक में रश्मिरथी पर्व के बहाने, राष्ट्रभक्ति के तराने के माध्यम से जहां राष्ट्रीय समस्याओं और उनके समाधान पर एक विमर्श प्रस्तुत करने की कोशिश की है तो 'डायरी का पन्ना, 'केंचुआ' जाना जरूरी क्या' जैसी कहानियां भी इस अंक का विषय बनी हैं। अपेक्षा है, आपको पसंद आएगी। फादर्स–डे पर अशोक अंजुम की कविता और वीरों की हुंकार शीर्षक से सुयश मिश्र की कविताएं आपकी चिंतन धारा में नयी लहरें पैदा करेंगी, ऐसा हमें प्रबल विश्वास है। अंक आपको कैसा लगा, आपकी प्रतिक्रियाओं का हमें दिली इंतजार रहेगा।

● दिनेश कुमार गुप्ता

गीत–संगीत की आशा

❑ निर्मला डोसी

'ये क्या जगह है दोस्तों ये कौनसा दयार है
हद ए निगाहें जहाँ गुबार ही गुबार है'

इस बारह अप्रैल को उनके महाप्रयाण की खबर आयी तो यकीनन हर संगीत प्रेमी की निगाहें दुख में गुबार से धुंधली हो गई, आँसुओं से छलछला गई। तिरानवे वर्ष की उम्र में भी वे अपने सरस कंठ के माधुर्य से जो इतिहास रच कर गईं वो भारतीय संगीत की अनमोल धरोहर हैं।

आशा भोंसले
(1933–2026)

जब भी हकीकत के गरम थपेड़ों से ऊब होने लगती है जिंदगी गीत–संगीत में सुकून ढूंढ लेती है। हम जीवन के किसी भी पड़ाव पर खड़े हों, चिलचिलाती धूप हो या गरम ठंडी हवा, समय सुहाना हो या गमगीन, संगीत की आरामगाह में जाकर हम सुकून पा लेते हैं। गीतों की आरामगाह को गढ़ने का काम हमारे हिंदी सिनेमा ने खूब किया है। दुनिया की दूसरी सभ्यताओं ने सिनेमा को भले मनोरंजन का साधन मात्र माना हो किंतु हिंदुस्तान का आम आदमी इस मनोरंजन में अपने जीवन के अक्स तलाशता है। गीत उसमें सतरंगी चेतना भरते हैं और जिंदगी उन गीतों के पंखों पर सवार होकर जीने का मायने सिखाती है।

समय के साथ काफी कुछ बदला है। चांद के बाद मंगल पर उतरने का अभियान भी पूरा हो चुका है, लेकिन आंखों में महकती खुशबू देखने वाली हर पीढ़ी अभी भी गाने सुनकर मुस्कुराती है रोती है हँसती है सांसों की लय और धड़कन की ताल पर जब तक जिंदगी तराना सुनाती रहेगी सुर मन के तार छेड़ते रहेंगे और समूची कायनात सुरीली बनी रहेगी, क्योंकि हमारे यहां दिल में सरपट उतर जाने वाले आखरों को रचने वाले गीतकार है, उन शब्दों को सरल संगीत में सजाने वाले संगीतकार है और इन दोनों के हुनर को अपनी दिलकश आवाज देने वाले गायक व गायिका और उन सभी को मां शारदा का वरदान प्राप्त है। हिंदी सिनेमा की गीतों के सफर की बात करें तो बात गीत–संगीत पर जाती है और गीत–संगीत की बात करें तो जो नाम लोकप्रियता की तमाम हदें पार कर चुके सुर–साधकों पर ठहरती है। आशा भोंसले का नाम हर हिंदुस्तानी संगीत प्रेमी जानता है, मानता है और गुनता भी है। लता जी, आशा जी, रफी साहब, मुकेश, किशोर कुमार जैसे रत्न हमारे समय में किंवदंती की तरह है। गायन के लंबे सफर में आशा जी के गाए गीत मील के पत्थर बन चुके हैं। उनको सराहने वालों में चाय या पान की दुकानों पर मौजूद लोग भी हैं और सभा समारोह में शिरकत करने वाले गुणी

रसिक भी हैं। आम व खास जगहों गुजरता उनका प्रशंसक समुदाय न केवल भारत भर में है बल्कि विश्व भर में मौजूद है जिसकी गणना अंतहीन है और हर दिन इजाफा हो रहा है, होता रहेगा।

तेरह सितंबर महाराष्ट्र के सांगली गांव में मास्टर दीनानाथ मंगेशकर के यहां दूसरी कन्या जनमती है। लता मंगेशकर इसी आंगन में पहले ही जन्म चुकी है। घर का माहौल संगीत की उर्मियों से भरपूर रचा पगा और पिता शास्त्रीय संगीत के घनघोर जानकार ही नहीं, धुरंधर गायक भी हैं। निरे बचपन से संगीत ही साजों की, आलापों की स्वर लहरियाँ घर के बच्चों के कानों में रस घोलती रही, बहलाती रही, संस्कार गढ़ती रही अनहद नाद की तरह। पिता प्रथम गुरु थे पर जब आशा नौ वर्ष की थी तभी वे अपनी कच्ची गृहस्थी छोड़ महाप्रयाण कर गए। कालांतर में उनका परिवार पुणे तथा बाद में मुंबई आ गया। लता दी का पहले गायन फिर अभिनय में प्रदार्पण हो चुका था। उन्हीं के निजी सचिव थे गणपत राव भोंसले ।सोलह वर्ष की आशा का एक बचपना उन्हें जीवन भर का दंश दे गया। घर वालों के विरोध के बावजूद उन्होंने इक्कीस वर्ष के भोंसले के साथ घर से पलायन कर विवाह कर लिया। बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था का संधि काल बड़ा फिसलन भरा होता है और वे नहीं संभल पायी।

मुंबई के उपनगर जोगेश्वरी की मामूली चाल में तो फिर भी वे रह लेती किंतु पति से मिली यातना को भुगतना बड़ा त्रासद था। मर्जी की शादी की थी नतीजे भी खुद को ही भुगतने थे। आजीविका के लिए कड़ा संघर्ष करना पड़ा। विवाह करते ही वे दाल रोटी जुटाने निकल पड़ी थी। कामयाबी का जो जगर–मगर करता संसार आज दिख रहा है वो आसानी से नहीं मिल गया था उन्हें, उसके लिए बड़ी जद्दोजहद की थी। बारह वर्ष का दुखद वैवाहिक काल एक बुरे सपने की तरह था। वे स्वयं कहती हैं कि उन दिनों की यातना के अक्स आज भी मेरे शरीर और उससे भी ज्यादा आत्मा पर देखे जा सकते हैं। सन् 1960 में उसके अप्रिय परिच्छेद का अंत हो गया। भोंसले ने उन्हें घर से निकाल दिया। दो मासूम बच्चों का हाथ थामें और तीसरा कोख में लिए हुए वे अपनी माँ की ममता की छांव में आ गईं। उसके बाद गायन के क्षेत्र में स्वयं को जमाने के लिए आशा जी ने धूप देखी ना छाँव, भूख देखी ना प्यास, बस उन्हें चिंता थी अपना परिवार पालने की। शादी के बाद से ही कर्म–क्षेत्र में तोजूझ ही रही थी। उस वक्त गाना मिलने का अर्थ था रोटी मिलना। माँ की देखरेख में बच्चों को छोड़, जीवन–संग्राम में जुट गईं। मीलों पैदल चलतीं काम पाने के लिए, धीरे–धीरे सब कुछ ढर्रे पर आने लगा। उनकी लगन व हौंसले ने उजड़े संसार को फिर से बसाया।

गौरतलब यह है कि स्वर्गीय भोंसले के लिए उनके मन में आज जरा भी नफरत नहीं है। वे मानती हैं कि खुद मैंने अपना नुकसान किया तो सजा भी मुझे ही भरनी थी। उसके बाद आशा जी ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। सफलता के शिखर पर जाने का रास्ता उन्होंने देख लिया था, अब चढ़ाना था तो चढ़ती चली गईं। गायन के सफर के बीच मिले राहुल देव बर्मन, जिनसे उनका परिचय स्वयं सचिन देव बर्मन ने यह कहकर करवाया कि मेरा बेटा है यह राहुल और शर्मीले राहुल ने आशा की तरफ एक नोटबुक व पेन बढ़ाया ओटोग्राफ के लिए। तब कौन जानता था कि यही राहुल आशा के साथ जीवन भर का अनुबंध करने वाले हैं ।एक बार ठोकर खा चुकी आशा ने बहुत सोच– समझकर, काफी समय साथ काम करने के बाद, राहुल देव बर्मन के साथ शादी का फैसला लिया था। वह विवाह सफल रहा किंतु नियति को यह कहां मँजूर था कि वे दोनों जीवन में खुशियाँ बटोरें तथा दो विलक्षण प्रतिभाओं का गठजोड़ संगीत के संसार में नए–नए अध्याय रचे। छोटी उम्र में ही राहुल महा प्रयाण कर गए। उनके संग–साथ ने आशा के अंतर्मन के सूने कोने को मान–सम्मान, प्रेम–प्यार से पूरी तरह लबरेज़ कर दिया था। कुछ समय सन्नाटे का तो रहा किंतु संगीत ने ही उन्हें इतना बड़ा आघात सहने की शक्ति दी, संभाल लिया।

आशा भोंसले अब तक विभिन्न भाषाओं के 16000 से ज्यादा गाने गा चुकी हैं ।सन 1946 में दस वर्ष की उम्र में पहला गाना मराठी फिल्म 'माँझा बाल' में गाया था जिसके बोल थे 'चला चला नव बाला' हिंदी फिल्मों का सफर 1948 से शुरू हुआ 'चुनरिया' फिल्म में गए गाने के बोल थे 'सावण आया'। गायन के जितनी भी प्रचलित विधाएं हैं आशा जी के गले ने उनमें कहीं मात नहीं खाई। फिल्म संगीत में पॉप, जॉज़, शास्त्रीय संगीत, क्षेत्रीय संगीत,लोक संगीत ,कव्वाली, रविंद्र संगीत, नज़रुल गीति, अर्थात तमाम तरह के आयाम और चौदह से ज्यादा भाषाओं में गाए गए उनके मीठे स्वर हिंदुस्तान भर में गूँजने लगे।

जिस वक्त आशा जी में गायन के क्षेत्र में कदम रखा, लता मंगेशकर पूरी गरिमा व लोकप्रियता के साथ विराजी हुई थीं साथ ही शमशाद बेगम, गीता दत्त भी खासी जम चुकी थी। कड़े संघर्षों के पश्चात जो गाने आशा जी को

मिलते वह ए ग्रेड फिल्मों के नहीं होते थे। उस वक्त बी या सी ग्रेड फिल्मों के गाने ही उन्होंने गाए। जो काम मिला, उसे लेना उनकी विवशता थी और काम को ईमानदारी से करना उनकी आदत, तब उनके गले का जादू कैसे लोगों के सिर चढ़कर ना बोलता। विमल राय की 'परिणीता' और राज कपूर की 'बूट पॉलिश' ओपी नैयर की 'सीआईडी' के बाद सन् सत्तावन में आई 'नया दौर', तब से तमाम चोटी के संगीतकार उनसे गंवाने लगे। जिनमें सचिन देव बर्मन भी थे और रवि भी। सन् 1966 में राहुल देव बर्मन की 'तीसरी मंजिल' में आशा जी के सुरीले गीतों ने जो इतिहास रचा उससे कोई अनजान नहीं है। साठ से सत्तर तक का पूरा दशक वो रहा, जब आशा हेलन की आवाज बन गई थी। सभी कैबरे गीत उन्होंने गाए। रिकॉर्डिंग के वक्त हमेशा हेलन मौजूद रहतीं और वे तमाम गीत कालजयी हो गए। 'कारवाँ' का 'पिया तू अब तो आजा' हो, या 'तीसरी मंजिल' का 'ओ हसीना जुल्फों वाली' हो या फिर 'डॉन' का 'ये मेरा दिल प्यार का दीवाना' सब के सब गाने सुपर डुपर हिट और जन–जन की जुबान पर चढ़ गए। सिनेमा हॉल में इन गानों पर बरसाने वाली रेज़गारी की खनखनाहट गाने की पहुँच का बयाँ होता था।

सन् इक्कासी में आती है 'उमराव जान' और सत्तासी में 'इजाज़त'। आशा जी के गायन पर टिप्पणी करने वालों और गीत संगीत की गहन समझ न रखने वालों की बेलाग बातों का करारा जवाब थी ये फिल्में। एक तरफ 'उमराव जान' के दिलकश मुज़रों को बड़ी संजीदगी से पेश करती हैं आशा शहरयार के सच्चे आबदार आखरों के मोतियों को सुरीले संगीत के नगीनों से सजाया था खयाम ने और मिश्री सी मीठी आवाज में आशा ने गाया तो संगीत प्रेमी झूम उठे थे। 'इजाज़त' में गुलज़ार के रूई के फाहों से कोमल शब्दों की नज़ाकत बरकरार रखते हुए गीतों को कविता जैसी कमनीयता से हौले–हौले गाती हैं तो श्रोता अपना कलेजा थाम लेता है। 'मेरा सामान धरा है सावन के कुछ भीगे–भीगे गीत रखे हैं और मेरे खत में लिपटी रात पड़ी है' इजाज़त की यह कविता और आशा का दर्द भरा गला, दोनों की जुगलबंदी से इजाज़त के गीत अमर हो गए थे। इन दोनों ही फिल्मों के गीतों ने लफ्फाज़ों को चुप ही नहीं करवाया, मोहर के तौर पर राष्ट्रीय पुरस्कार दिलवाकर मुंह बंद भी कर दिया था।

तब से उनके गायन का ग्राफ पूरी रफ्तार तथा गरिमा से ऊपर जा रहा था पर आशा के खजाने में तो अभी अनेक आश्चर्य की अशर्फियां भरी थीं जिनसे उनके प्रशंसकों को मालामाल होना था। सन 1995 में 'रंगीला' से उनकी दूसरी पारी की शुरुआत होती है। उर्मिला मातोंडकर जैसी कम उम्र की हीरोइन के कच्चे गले की दूधिया चाशनी एक– मेक हो जाता है आशा के कँठ के तिलिस्म में। 'तन्हाँ तन्हाँ' गीत देश भर में गूँज उठा था।

सन् 2005 में 'चंद्रमुखी' के गीत गातीं हैं और बहत्तर वर्ष की उम्र में पॉप संगीत गाती हैं। उस वक्त 'लकी लिप्स' तथा 'चार्टबस्टर' गाया था। 2004 में 'वेरी बेस्ट ऑफ आशा भोंसले' और 'द क्वीन ऑफ़ बॉलीवुड' एल्बम ने धूम मचा दी थी। कहने का तात्पर्य है कि आशा भोंसले कम उम्र में संघर्षों की आँच में तप कर, बेमुरव्वत जमाने की ठोकरों से पिटकर सौ प्रतिशत टंच खरा सोना बन कर निकली। गायन का कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा जहां उनकी उपस्थिति दर्ज न हुई हो। ना कभी उनकी उम्र बाधक बनी ना लोगों के अनर्गल प्रलाप। हर आलोचक ने भी माना कि जो वे कर सकती है उसे सिर्फ वे ही कर सकतीं हैं। उनके सिर पर माँ शारदा का वरद हस्त है। फेहरिस्त बनाने लगें तो उनके खाते में कामयाबियों के अनगिनत सितारे मिलेंगे।

तमाम नामी–गिरामी संगीतकारों के साथ आशा जी ने काम किया है। सन् बावन में 'मांगू' फिल्म में ओ पी नैयर उनसे गवा चुके, फिर 'सीआईडी', 'हावड़ा ब्रिज' ' नया दौर' आशा की फूलों जैसी ताजी आवाज़ की बानगी है। 'वक्त' 'गुमराह' 'आदमी और इंसान' धुँध आदि बी आर चोपड़ा की फिल्में थीं। राहुल देव बर्मन के साथ 'ओ मेरे सोना रे सोना, दे दूंगी जान जुदा मत होना रे' की मिठास तो जग जाहिर है। शम्मी कपूर ने आशा जी की चुलबुली आवाज पर चुटकी लेते हुए कहा था कि –रफी मेरे लिए गाते हैं, नहीं तो मेरे गाने तो आशा जी भी गा देतीं।

सन् 1981 में आई 'उमराव जान', जिसे मुजफ्फर अली ने निर्देशित किया था। सौंदर्य, साहित्य, संगीत, और अदायगी अर्थात सिनेमा के माध्यम को कलात्मक उँचाइयों पर आसीन करने वाली अनायास एक दुर्लभ कृति बन गई थी। ऐसी चीजें कभी कभार आकार लेती हैं यकीनी तौर पर अनेक कला के कारीगरों की बराबर की भागीदारी से ही ऐसे शहकार ने आकार धरा था जो भी था, कमाल था ।उसके गाने सुधी संगीत प्रेमियों की दस विशेष फिल्मों के गाने सूची में शामिल न हो, यह मुमकिन ही नहीं और यदि ऐसा हो भी जाए तो मानना चाहिए कि वह श्रोता गीत–संगीत का जानकार ही नहीं है। 'ये क्या जगह है दोस्तों ये कौन सा

दयार है' गीत में निर्णय करना मुश्किल है कि दर्द से भीगे शब्द ज्यादा भारी है या आशा जी के गले का अद्भुत जादू या फिर पार्श्व में संगत करता मार्मिक संगीत कलेजे में हुक उठा रहा है या फिर उमरावजान बनी रेखा की निष्पाप आँखों की मुखर आत्मबयानी। सबकी अपनी–अपनी दलीलें हो सकती है अपनी अपनी पसंद भी, किंतु लबों पर लंबे समय तक जो तारी रहता है वह तो आशा जी का गाया गीत ही है। तब प्रमाणिकता का प्रमाण क्या दे कोई?

उमराव जान की इन्हीं गजलों ने आशा जी को प्रथम राष्ट्रीय पुरस्कार दिलवाया। किस्मत का वो गाना 'आओ हुजूर तुमको सितारों में ले चलूं, दिल झूम जाए ऐसे नजरों में ले चलूं 'सिर्फ फिल्म के नायक के लिए थोड़े ही गाया गया था। वो आवाज तो अपने तमाम श्रोताओं को सितारों में ले जाने की कूव्वत रखती है। मेरे सनम का गाना 'जाईये आप कहाँ जाएंगे' ऐसी दिलकश आवाज सुनकर कौन अभागा उससे दूर जा सकता है। कश्मीर की कली का 'इशारों ही इशारों में' कौन बुला सकता है। रवि आशा को अपनी पसंदीदा गायिका मानते थे। सन 1955 में 'वचन' की लोरी 'चंदा मामा दूर के पुए पकाए दूर के' की टक्कर की अब तक कोई लोरी नहीं सुनी जिसमें आवाज की मीठी चासनी घुली हो और 'दिल्ली के ठग' का वो चुलबुला गाना सी ए टि कैट, कैट माने बिल्ली' गाने का मजेदार ढंग विमुग्ध कर देता है। उनके गानों की विविधता गौर करने वाली है एक तरफ चुलबुले गाने हैं तो दूसरी तरफ कैबरे गीत है, तीसरी तरफ गज़लें हैं मुज़रे हैं और कविताएं हैं। काज़ल का भजन 'तोरा मन दर्पण कहलाए' अर्थात उनके गायन के विशाल फलक का न कोई और है न छोर।

आरडी बर्मन ने कई लोकप्रिय गीतों को आशा जी की आवाज में बांग्ला में रिकॉर्ड करवाया। एक स्वप्नजीवी स्वरों तथा सुरों का अन्वेषक संगीतज्ञ और दूसरी गायन के प्रति पूर्ण समर्पित निष्ठावान कलाकार की जोड़ी का परिणय बंधन आर डी के जीवन पर्यंत चला। और लंबा चलता तो भारत के सीने संगीत में न जाने कितने इतिहास बनाता किंतु अफसोस राहुल देव बर्मन जल्दी ही चले गए। एक बार फिर आशा जी को अवसाद में घेर लिया था। कुछ समय तक सन्नाटा पसरा भी फिर आशा जी के अंदर की वेदना विरह और वीरानगी अंततः स्वरों का अवलंब लेकर बह निकली और वे अपनी मंजिल की तरफ बढ़ने लगी। आशा भोंसले जयदेव की अच्छी मित्र मानी जाती थी। सन् सत्तासी में जयदेव के निधन के बाद उनके कम प्रसिद्ध गीतों का 'स्वरांजलि' नाम से एल्बम निकाल कर अपनी श्रद्धा व्यक्त की। शंकर जय–किशन के निर्देशन में उन्होंने अनेक लोकप्रिय गीत गाए थे। सन् 1968 में 'शिकार' फिल्म का 'पर्दे में रहने दो' ने उन्हें दूसरा फिल्मफेयर अवार्ड दिलवाया। 1970 में बनी 'मेरा नाम जोकर' के गीत भी उन्हीं के हिस्से में आए। दक्षिण भारत के संगीत निर्देशक ईलिया राजा के लिए 1980 से ही गाना शुरू कर दिया था। 1982 में 'सदमा' बनी, साथ ही अनेक तमिल फिल्मों के गीत गाए। समूचे दक्षिण भारत में भी उनके गले का जादू चल गया था। सन 1960 में सरदार मल्लिक के साथ 'सारंगा' में गा चुकी आशा जी ने अनु मल्लिक के साथ 'सोहिनी महिवाल' 'बाजीगर' में अपनी रेशमी आवाज दी। कमल हसन की 'हे राम' एआर रहमान की 'रंगीला' के बाद 'तक्षक' की। 'लगान' व 'ताल' में गाया। संगीत निर्देशक सलिल चौधरी, मदन मोहन, लक्ष्मी प्यारे, नौशाद, रविंद्र जैन, हेमंत कुमार, जतिन ललित, बप्पी लहरी, कल्याण जी आनंद जी, उषा खन्ना, चित्रगुप्त, रोशन इत्यादि तमाम संगीत निर्देशकों के अनेक गीत आशा जी ने गाये। उनके कृतित्व को चंद पृष्ठों में समेट पाना लगभग नामुमकिन है। उनके गीतों के खजाने की गठरी को कितनी भी सावधानी से खोला जाए फिर भी नागिनें बंद मुट्ठी से खिसकने का खतरा बना ही रहता है।

लब्बोलुआब यह है कि यह वह वक्त था जब बहु आयामी विलक्षण प्रतिभा संपन्न आशा जी से हर संगीतकार गंवाना चाहता था। उन्होंने भी हर छोटे–बड़े संगीतकार के साथ काम किया। अपनी लब्धप्रतिष्ठित बहन लता दी के साथ गाए मराठी गीत काफी प्रसिद्ध हुए। मराठी उनकी मातृभाषा थी, अनेक मराठी कविताएं भावगीत के रूप में प्रसिद्ध है।

आशा भोंसले के गाए फिल्मी गीतों तथा उनके संगीतकारों पर बात हो जाने के बाद उनके गाए एल्बमों पर भी चर्चा होना जरूरी है। श्रीधर फड़के द्वारा रचित आशा जी का गाया गीत 'ऋतु हिरावा' एल्बम खासी ख्याति अर्जित कर चुका है। अपने भाई हृदयनाथ मंगेशकर द्वारा संगीतबद्ध किये अनेक मराठी गीत व भजन जन–जन की जुबान पर चढ़ चुके हैं। गौर करने वाली बात यह है कि आशा जी के चार करोड़ से ज्यादा गाने के रिकॉर्ड बिक चुके हैं। आठ सितंबर सन सत्तासी को उनके जन्मदिन पर दिल पड़ोसी है एल्बम गुलजार द्वारा रचित तथा आरडी बर्मन द्वारा संगीतबद्ध रिलीज हुआ। सन् 1995 में उस्ताद अली अमजद खान के साथ में कैलिफोर्निया में ग्यारह बंदिशें रिकॉर्ड की गई और यह एल्बम ग्रैमी अवार्ड के लिए नामांकित हुआ ।यह कोई मामूली बात नहीं है बड़े गर्व की बात है। 'राहुल और मैं'

एल्बम मांग हर वक्त रहती है। जिसे बहुत सराहा गया। बाद में इंडो पाक एल्बम 'जानम समझा करो' बना लेस्ली लुईस के साथ, जिसे एमटीवी अवॉर्ड 1997 में मिला। 2002 में 'आपकी आशा' नाम का वीडियो एल्बम आया जिसका संगीत भी आशा जी ने तैयार किया है। गीत मजरूह सुल्तानपुरी के थे, सचिन देव बर्मन ने विशेष समारोह में उसे जारी किया था। पाकिस्तानी गायक अदनान सामी के साथ 'कभी तो नजर मिलाओ गाया और उस एल्बम ने धूम मचा दी थी। उन्हीं के साथ 'बरसे बादल' एल्बम किया। 'मिराज़े गज़ल', 'अब शहर एक ग़ज़ल' 'कशिश' इत्यादि कई गज़लों के एल्बम किये, इतना ही नहीं सन् 2005 में एक एल्बम चार गज़ल गायकों को समर्पित किया। मेहंदी हसन, गुलाम अली, फरीदा खानम, तथा जगजीत सिंह की प्रसिद्ध गज़लें थी। फरीदा खानम की 'आज जाने की जिद ना करो' गुलाम अली की 'चुपके—चुपके' तथा 'दिल में एक लहर सी' मेहंदी हसन की 'रंजिशे ही सही' 'रफ्ता—रफ्ता' और जगजीत सिंह की 'आहिस्ता आहिस्ता' शामिल थी। उस बेशकीमती एल्बम की मांग आज भी है, हर वक्त रहती है। आशा जी के साठवें जन्मदिन पर आई एम आई इंडिया ने तीन एल्बम जारी किए। 'बाबा मैं बैरागन' भक्ति गीतों का, 'द गोल्डन कलेक्शन ऑफ़ गज़ल' तथा 'द एवर वर्सेटाइल आशा भोंसले' था। सन 2006 में 'आशा एंड फ्रेंड्स' एल्बम रिकॉर्ड हुआ जिसमें संजय दत्त तथा उर्मिला मांतोड़कर ने तो गाया ही, प्रसिद्ध क्रिकेटर ब्रेटली ने भी गाया। मशहूर अंतर्राष्ट्रीय कलाकार ब्वॉय जॉर्ज के साथ भी उनका एक एल्बम बना।

जाहिर है इतना विशाल कार्यक्षेत्र, ऐसी विविधता और इतने प्रशंसक हों तो फिर इनामो इकराम की झड़ी तो लगनी ही थी जिसकी वे वाजिब हकदार भी हैं। जबकि सच तो यह है कि वे तमाम पुरस्कार आशा जी के साथ जुड़कर स्वयं ही पुरस्कृत हुए हैं।

14 भाषाओं में 14000 से ज्यादा गीत गाने वाली आशा भोंसले के रिकॉर्ड की बिक्री चार करोड़ से ज्यादा है। उन्हें सात बार सर्वश्रेष्ठ पार्श्व गायिका का फिल्म फेयर पुरस्कार मिला है, दो बार राष्ट्रीय पुरस्कार मिला है। मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 1989 में तथा 1999 में महाराष्ट्र सरकार द्वारा लता मंगेशकर पुरस्कार मिला है। सन 2000 में दादा साहब फाल्के तथा 2001 में लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड दिया गया। 2002 में बीबीसी ने लाइफटाइम अचीवमेंट तथा 2004 में फिक्की का लिविंग लीजेंड मिला। सन 2008 में पद्म विभूषण अलंकरण राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल के हाथों दिया गया। इसके अतिरिक्त 87 में नाइट एंगल ऑफ एशिया, 1997 में स्क्रीन वीडियोकॉन अवार्ड, 1997 में एमटीवी अवॉर्ड, 1997 में वी चैनल अवार्ड, सन् 98 में दयावती मोदी सम्मान, 2000 में सिंगर आफ मिलियनियम अवार्ड और 2000 में जी गोल्ड बॉलीवुड अवार्ड दिए गए।

'राधा कैसे न जले' 'लगान' के इस गीत ने तो इनामों इकराम की बौछार ही कर दी थी। जी सिने अवार्ड, हॉल ऑफ़ फेम अवार्ड, और भी न जाने कितनी जगह से कितनी संस्थाओं ने नवाजा। सन 2004 में इंडियन चैंबर कॉमर्स फेडरेशन ने लिविंग लीजेंड अवार्ड दिया। 2005 में मोस्ट स्टाइलिश पीपल इन म्यूजिक अवार्ड दिया गया। अमरावती तथा जलगांव विश्वविद्यालयों ने उन्हें साहित्य में डॉक्टरेट ऑफ लिटरेचर सम्मान दिया।

बहुत कुछ समेटने की कोशिश करने के बावजूद काफी कुछ छूटा है मुझसे, यह तय है। आखिर सागर को खंगालने की हिमाकत की है मैंने।

फिल्मों, गीतों, संगीतकारों, एल्बमों तथा इनामों की चर्चा के बाद कुछ बातें आशा ताई पर भी होनी जरूरी है। आशा जी का एक और अनूठा रूप था वह है अन्नपूर्णा का भव्य रूप।वे बेहद उम्दा व लजीज़ खाना पकाती थी। कढ़ाई गोश्त, बिरियानी पाया करी, फिश करी, व दाल इत्यादि कुछ विशेष तरह के व्यंजनों को पकाने में उन्हें महारत हासिल थी। उनके पकाए व्यंजनों को चख पाने का सौभाग्य जिसे भी मिला, वे उनके मुरीद हो गए। कुवैत तथा दुबई में उनके नाम के रेस्टोरेंट चलते हैं। जो 'वापी ग्रुप' के तहत हैं। जहाँ के पारंपरिक उत्तर भारतीय व्यँजन प्रसिद्ध है। राज की बात यह भी है कि उनमें काम करने वाले शेफ को आशा जी ने खुद ट्रेनिंग दी है। वे गज़ब की मिमिक्री अदाकारा थी। उनका पसंदीदा पहनावा सफेद सिल्क की साड़ी व मोतियों का आभूषण था। पैडर रोड के प्रभु कुंज नाम के अपार्टमेंट में रहती थी। किशोर कुमार की जबरदस्त प्रशंसक और पिता को अपना आदर्श मानती थी। जीवन के नवें दशक में भी संगीत की सेवा में लगी है। जज के बतौर टीवी के संगीत कार्यक्रमों में आकर नए गायकों की गायकी जांचती। इसी बहाने तीन चार पीढ़ियाँ उन्हें सशरीर छोटे पर्दे पर ही सही देख तो पाते थे। और यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है। हम सौभाग्यवान है कि इस युग में जन्मे जिसमें आशा दी जैसी प्रतिभा को देख सुन पाए। ◆

पता : नीलकंठ बंगला, प्लाट नं.—81, निकट दयानन्द विद्यालय, चारकूप, सेक्टर—1, कांदिवली, पश्चिम मुम्बई—400067

मो. : 9322496620

रश्मिरथी पर्व के बहाने, राष्ट्रभक्ति के तराने

❑ सियाराम पांडेय 'शांत'

उत्तर प्रदेश देश का सबसे बड़ा राज्य इसलिए भी है कि वह सबके बारे में सोचता है। सबकी चिंता व्यक्त करता है। यही वजह है कि ईश्वर के अधिकाधिक अवतार इसी राज्य में हुए हैं। रश्मिरथी पर्व के बहाने उत्तर प्रदेश ने गहन राजनीतिक और बौद्धिक विमर्श की जमीन तैयार की है। उसने भारतीय साहित्य समाजसेवा और राजनीति के जिन चार शिखर पुरुषों राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर', लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, अटल बिहारी वाजपेयी और स्वामी विवेकानंद को याद किया है, राष्ट्र निर्माण में उनका बड़ा योगदान रहा है। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का नाट्य रूपांतरण विरासत को सहेजने और संभालने का बड़ा प्रयोग है। यह कार्यक्रम ऐसे वक्त में किया गया है जब देश को जातिवादी नफरत की आग में झोंकने की दुरभि संधियां हो रही हैं। आरक्षण के लिए योग्यता को कठघरे में खड़ा करने के लिए किसिम–किसिम की चालें चली जा रही हैं। वैसे भी कवियों और साहित्यकारों के नाम पर आयोजन कम ही होते हैं। बहुधा तो होते ही नहीं और अगर होते भी हैं तो राजनीतिक दल संदेशों की खेती करने और उससे लाभान्वित होने का एक भी मौका अपने हाथ से जाने नहीं देते। इसे गनीमत ही कहा जाएगा कि इस आयोजन का उद्देश्य राष्ट्र धर्म का परिपालन ही रहा है। वैसे किसी भी चीज को देखने के लिए समर्थन और विरोध की दो आंखें होती हैं। कौन किस आंख से चीजों को देखता और समझता है, यह तो उसके विवेक पर ही निर्भर करता है।

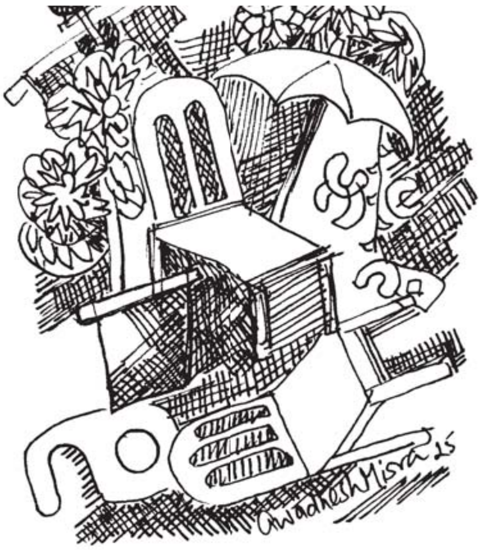

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' को याद किया गया। उनकी 52वीं पुण्य तिथि पर उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि दी गई। इस अवसर पर उन्हें ही नहीं, उनकी कालजयी काव्यकृति 'रश्मिरथी 'को भी राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक समादर प्राप्त हुआ। तीन दिवसीय 'रश्मिरथी पर्व' के आयोजन में केंद्र और राज्य के मंत्रियों की समुपस्थिति यह बताने–जताने के लिए काफी थी कि उत्तर प्रदेश की मौजूदा सरकार

विकास के साथ विरासत का सम्मान करने के प्रति कितनी गंभीर है? कृति और कृतिकार का यह सम्मान वाकई काबिले तारीफ है। विकथ्य है कि इसी साल रश्मिरथी के प्रकाशन के 75 साल पूरे हुए हैं। किसी काव्यकृति का 75 साल तक जनता के हृदय में बने रहना अपने आप में बड़ी उपलब्धि है। आज कल तो पुस्तकों की चर्चा, विमोचन और समीक्षाओं तक ही सिमट कर रह जाती है लेकिन रश्मिरथी के छंदों ने न केवल देश को राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मुखरता प्रदान की है बल्कि शांति के हर संभव प्रयासों का भी संदेश दिया है। 'दो न्याय अगर तो आधा दो, इसमें भी गर बाधा हो तो दे दो केवल पांच ग्राम, रक्खो अपनी धरती तमाम 'जैसे छंद आज भी लोगों की जिह्वा पर सहज ही प्रकट हो जाते हैं।

रश्मिरथी पर्व के शुभारंभ अवसर पर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने न केवल 'रश्मिरथी से संवाद' स्मारिका का विमोचन किया बल्कि नाट्य प्रस्तुति रश्मिरथी का अवलोकन भी किया। यही नहीं, उन्होंने रश्मिरथी को समाज और राष्ट्र को दिशा देने वाली कृति भी करार दिया। इस अवसर पर उन्होंने भारत को मजबूत, आत्मनिर्भर और विकसित बनाने के लिए राष्ट्रकवि दिनकर की रचनाओं को याद करते हुए कहा कि उन्होंने जातिवाद पर कड़ा प्रहार किया है। 'जाति हाय री जाति कर्ण का हृदय क्षोभ से डोला' जैसी कविता के अपने गहरे अर्थ हैं। यदि हमें भारत की आजादी को अक्षुण्ण बनाए रखना है और विकसित भारत की परिकल्पना को साकार करना है, तो जातिवाद के नाम पर देश को लूटने वाले राष्ट्रद्रोहियों से सावधान रहना होगा। दिनकर जी ने जातिवाद पर सशक्त प्रहार करते हुए लिखा है– 'मूल जानना बड़ा कठिन है नदियों का, वीरों का, धनुष छोड़कर और गोत्र क्या होता रणधीरों का। पाते हैं सम्मान तपोबल से भूतल पर शूर, जाति–जाति का शोर मचाते केवल कायर क्रूर।'

रश्मिरथी पर्व का आयोजन देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में तब हो रहा है जब समूचा विपक्ष एक स्वर में जातीय जनगणना के मुद्दे उछाल रहा है। देश में जातीय सर्वे के शोशे उछाले जा रहे हैं। दिनकर की जन्मभूमि बिहार में जातीय सर्वे को मंजूरी दी जा चुकी है। गैर भाजपा शासित राज्यों में भी इस तरह की पहल को प्रोत्साहन मिल रहा है, ऐसे में रश्मिरथी पर्व का आयोजन वाकई मायने रखता है। इस अवसर पर मुख्यमंत्री ने राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर के पौत्र ऋत्विक उदयन को स्मृतिचिह्न भेंटकर सम्मानित भी किया।

मुख्यमंत्री ने संस्कृति विभाग को निर्देश दिया कि ऐसी साहित्यिक कृतियों पर आधारित कार्यक्रम आज की पीढ़ी के लिए नई प्रेरणा हैं और इन्हें आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। उन्होंने भातखंडे संस्कृति विवि और अन्य संस्थानों के युवाओं को भी इस कार्यक्रम में सहभागी बनाने का आह्वान किया। मुख्यमंत्री ने कहा कि साहित्य समाज का दर्पण होता है और ऐसी कृतियां हम राष्ट्र को कैसा बनाना चाहते हैं, उसका आधार बनती हैं।

मुख्यमंत्री ने स्वामी विवेकानंद, पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी और लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को नमन करते हुए न केवल उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला बल्कि स्वामी विवेकानंद को हर भारतीय के लिए प्रेरणास्रोत बताया, वहीं वह यह बताने में भी पीछे नहीं रहे कि लखनऊ में ही लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूंगा का उद्घोष किया था। मुख्यमंत्री योगी ने यह भी स्वीकार किया कि वे अक्सर दिनकर जी की कृतियों के कुछ अंश लेकर विरोधियों पर प्रहार करते हैं। मुख्यमंत्री ने कहा कि दिनकर जी ने रश्मिरथी में लिखा है–ऊंच–नीच का भेद न जाने वही श्रेष्ठ ज्ञानी है, दया–धर्म जिसमें हो सबसे वही पूज्य प्राणी है। उन्होंने दिनकर की इन पंक्तियों को भी पढ़कर सुनाया–सच है, विपत्ति जब आती है, कायर को ही दहलाती है, सूरमा नहीं विचलित होते, क्षण एक नहीं धीरज खोते, विघ्नों को गले लगाते हैं, कांटों में राह बनाते हैं। वैसे भी उन्होंने दिनकर की जिन पंक्तियों का हवाला दिया, वह उनके विरोधियों को रास नहीं आई होगी लेकिन इस सच से कौन इनकार कर सकता है कि सच की चोट सबसे बर्दाश्त नहीं होती।

वहीं, रश्मिरथी पर्व के मुख्य वक्ता और केंद्रीय कृषिमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने राष्ट्रकवि दिनकर की रचनाओं और

ओजस्वी विचारों की प्रशंसा करते हुए उन्हें नमन किया और इस पर्व को भारतीय सांस्कृतिक चेतना, समता और समरसता के विचारों को फिर से याद करने का एक महत्वपूर्ण अवसर करार दिया। दिनकर की रश्मिरथी के मुख्य पात्र कर्ण के जीवन के माध्यम से मानवीय गुणों, बलिदान और वीरता के संदेश को रेखांकित किया।

रश्मिरथी पर्व के दूसरे दिन का मुख्य आकर्षण स्वामी विवेकानंद के सांस्कृतिक भारत के निर्माण में योगदान विषय पर आयोजित परिसंवाद रहा। नाट्य मंचन से पूर्व वक्ताओं ने कहा कि स्वामी विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति, आत्मगौरव और आध्यात्मिक चेतना को विश्व मंच पर नई पहचान दिलाई। उन्होंने युवाओं को आत्मविश्वास, राष्ट्रसेवा और चरित्र निर्माण का संदेश दिया, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना तब था। स्वामी विवेकानंद के जीवन पर आधारित नाट्य मंचन तकरीबन करीब 90 मिनट तक चला। इसमें कलाकारों ने स्वामी विवेकानंद के संघर्ष, तपस्या और शिकागो धर्म संसद में दिए गए उनके ऐतिहासिक उद्‌बोधन को प्रभावशाली ढंग से मंचित किया, जिसे दर्शकों ने खूब सराहा। इस बीच उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य ने जल संरक्षण, पर्यावरण संतुलन और समाज की सहभागिता पर जोर देते हुए पानी पंचायत पुस्तक का विमोचन भी किया। उन्होंने कहा कि स्वामी विवेकानंद आज भी युवाओं के लिए आदर्श हैं। उनके विचार संकल्प शक्ति, आत्मविश्वास और सकारात्मक ऊर्जा का संदेश देते हैं।

रश्मिरथी पर्व के अंतिम दिन लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के व्यक्तित्व और कृतित्व की चर्चा तो हुई ही, राष्ट्र निर्माण में उनके अवदानों को भी शिद्दत के साथ याद किया गया। उनके राजनीतिक, सामाजिक और लोकमंगलकारी प्रयासों को सांस्कृतिक प्रस्तुतियों में ढालकर कलाकारों ने एक तरह से उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि भी दी। बड़ी तादाद में युवाओं, साहित्य प्रेमियों और बुद्धिजीवियों की सहभागिता ने कार्यक्रम में चार चांद लगा दिए। इस दौरान पूरा परिसर भारत माता की जय के नारों से गूंज उठा। कार्यक्रम में लोकमान्य तिलक के स्वराज, स्वाभिमान और राष्ट्र चेतना के संदेश को मंचन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। वहीं अटल बिहारी वाजपेयी की कविताओं पर आधारित संगीतमय नृत्य नाटिका अटल स्वरांजलि भी दर्शकों के हृदय में गहरे तक उतर गई।

उत्तर प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष सतीश महाना ने इस अवसर पर कहा कि जिन चार महापुरुषों के व्यक्तित्व पर यह आयोजन केंद्रित है, उनके योगदान पर घंटों चर्चा की जा सकती है। अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में कार्य करने का अवसर उनके जीवन का सौभाग्य रहा। कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही की मानें तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के आह्वान पर महापुरुषों की विरासत पर गर्व करने और उन्हें सम्मान देने की दिशा में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने सार्थक पहल की है। बनारस से शुरू हुए ऐसे आयोजनों को अब राजधानी लखनऊ तक विस्तार दिया गया है, जिससे नई पीढ़ी राष्ट्रनायकों के जीवन से प्रेरणा ले सके। विकास के साथ संस्कृति का समन्वय योगी सरकार प्रदेश में विकास और सांस्कृतिक चेतना को साथ लेकर चल रही है। एक ओर एक्सप्रेस–वे, मेडिकल कॉलेज, स्मार्ट सिटी, निवेश और रोजगार के नए अवसर सृजित किए जा रहे हैं, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रनायकों, संतों, साहित्यकारों और समाज सुधारकों की स्मृतियों को सहेजने के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। रश्मिरथी पर्व जैसे आयोजनों से स्पष्ट है कि योगी सरकार केवल भौतिक विकास ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और वैचारिक समृद्धि की दिशा में भी प्रभावी कार्य कर रही है। इस तरह के कार्यक्रम होते रहने चाहिए लेकिन यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि साहित्यिक धरा पर बहुत कुछ नया और विलक्षण सृजित हो रहा है, लेकिन सबको इस तरह का गौरव नहीं प्राप्त हो पा रहा। किसी भी कृति के कालजयी होने में उसका पाठ्यक्रमों में शामिल होना भी मायने रखता है। साहित्यकारों को जीवंत और जागृत बनाए रखने के लिए इस तरह के आयोजन निरंतर होते रहने चाहिए। यही मौजूदा वक्त का तकाजा भी है। ◆

पता : आर.एच.ए.–2,खसरा नंबर–259, रॉयल ग्रीन सिटी कॉलोनी, लौलाई, चिनहट, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

मो. : 7459998968

डायरी का पन्ना

❑ अंजु त्रिपाठी

''कितनी बार तुमसे कहा है, जब मैं ऑफिस का काम करूं तो किसी भी तरह की आवाज घर में नहीं होनी चाहिए... हजार बार बता चुका हूँ, पिन ड्रॉप साइलेंस रखा करो लेकिन नहीं। खैर, समझोगी भी कैसे तुम, काला अक्षर भैंस बराबर।''

''मालूम नहीं चला, आप काम कर रहे हैं। वैसे भी आप हमेशा लैपटॉप चलाते रहते हैं तो समझ नहीं पाई।''

''अनपढ़ों की यही तो दिक्कत है, गलती भी करेंगे तो मानेंगे नहीं। ऊपर से बहस करने में भी कोई कमी नहीं रहेगी।''

अनपढ़, गँवार जैसे शब्द सुनते ही विशाखा का कलेजा फट जाता था। हालांकि बीए उसने किया हुआ है, लेकिन उसी तरह जितने में शादी–ब्याह की दिक्कत न आए।

"बीए किए हुए इंसान को कोई अनपढ़ थोड़े ही कहता है। हमारे यहाँ तो लोग शान से कहते हैं– 'लड़की बीए पास है।' शादी भी कोई जबरदस्ती तो की नहीं गई थी खुद ही घरवालों के साथ देखने आए और पसंद करके गए थे। जितना दहेज चाहिए था, उतना पिताजी ने दिया। इस इंसान से शादी के पहले मैं भी अपने आप को हूर की परी ही समझती थी। और इनके घर वालों ने भी तो यही कहा था पिताजी से कि लड़की सुंदर है, तभी एक बार में पसंद आ गई, वरना कितनी लड़कियों की तो तस्वीर देखकर ही लड़के ने मना कर दिया था।" डांट सुनने के बाद हर बार वह यही बुदबुदाती थी।

घर में, परिवारवालों के सामने सब कुछ बिल्कुल ठीक–ठाक था। लेकिन मुंबई आते ही उसके तेवर अचानक बदल गए। शुरू में मुझे लगा कि शायद यह नौकरी का दबाव है– कॉर्पोरेट जॉब, जहाँ हर दिन टारगेट्स की तलवार सिर पर लटकती रहती है। पर क्या यह परिस्थितियाँ उसके कठोर और दबाने वाले व्यवहार को सही ठहरा सकती हैं? बिल्कुल नहीं।

पहले मैं भी भोली ही थी। हर समय 'आप–आप' करती रहती थी। लेकिन जब सामने वाला

इज्जत ही न करे तो ऐसी औपचारिकता किस काम की? उल्टा इसे तो यही लगता कि मैं इससे डरकर इसकी सारी बातें मान रही हूँ।

इसे तुम या तू बुलाती हुई लड़कियां ज्यादा कूल लगती हैं न, तो मैंने सोचा कि मैं भी कूल रहूंगी। लेकिन मेरा कूल रहना भी इसको सुहाता नहीं है। आपसे तुम बुला देती हूँ तो इसका माथा ठनक जाता है। 'आप' बुलवाना हो तो ऐसा आचरण भी करना चाहिए, जिससे इज्जत देते हुए गर्व महसूस हो।

कभी–कभी तो लगता है कि मेरी सारी गतिविधियों का रिमोट उसके हाथ में है : जब वह चाहे, मैं उठूँ, जब वह चाहे, मैं बैठूँ, जब वह चाहे, मैं सो जाऊँ, जब वह चाहे, मैं सन्नाटे में डूब जाऊँ, जब वह चाहे, मैं बोलूँ, जब वह चाहे, मैं उसका मनोरंजन करूँ, और जब वह चाहे, तभी रात को उसका दिल बहलाऊँ। बिना मेरी ओर ध्यान दिए, कितनी निर्दयता से वह मेरी सीमाओं को भेदता है। कभी यह सोचता ही नहीं कि मैं दर्द में हूँ या खुश, न ही कभी मेरे चेहरे को पढ़ने की कोशिश करता है। भूखे भेड़िए की तरह वह एक ही पल में सब कुछ समेट लेना चाहता है। उस क्षण मुझे लगता है, मानो कोई बदबूदार साया मेरे पूरे बदन पर रेंग रहा हो–एक ऐसा साया, जो सिर्फ मेरी देह ही नहीं, मेरी आत्मा को भी कुचल रहा है।

कमबख्त, मेरी जिंदगी मदारी का खेल बन गई है। मालिक कहता है "जमूरे नाच"– तो नाच पड़ती हूँ, मालिक कहता है "जमूरे करतब दिखा"–तो उछल पड़ती हूँ।

जब यह घर पर होता है तो काम का बहाना बनाकर मुझे चुप करा देता है, और ऑफिस से लौटते ही थकान का हवाला देकर धड़ाम से बिस्तर पर गिर पड़ता है। फिर पूरी रात उसके खर्राटों की गड़गड़ाहट कमरे में गूँजती रहती है।

कभी सोचती हूँ...क्या मेरी जिंदगी बस इतनी–सी है? क्या मैं सिर्फ इसलिए पैदा हुई हूँ कि उसकी हर ख्वाहिश पूरी करूँ, चाहे वो मुझे कितना ही चोट पहुँचाए? फिर माँ की बातें कानों में बजने लगती हैं–"शादी में समझौता करना पड़ता है, मर्द ऐसे ही होते हैं, थोड़ा बर्दाश्त कर ले।"

आज सुबह जब मैंने उसे चाय की प्याली थमाई, तो उसने मेरी ओर नजर तक नहीं डाली। फाइलों में डूबा रहा और बिना देखे ही कह दिया– 'उफ्फ! तुमसे एक ढंग की चाय भी नहीं बनती। तुमसे तो कुछ भी ठीक तरह से हो ही नहीं सकता।

मैं कुछ पल उसे देखती रही और चुपचाप वहीं खड़ी रही। वजह यह नहीं थी कि मैं कुछ सुनना चाहती थी, बल्कि इसलिए कि शायद... शायद वह एक बार मेरी ओर देखे। पर उसने नहीं देखा। मेरे भीतर लगातार कुछ टूट रहा था– बेआवाज, बिना किसी चीख के।

जब यहाँ आई थी, तो सोचा था कि अपने सपनों को इस घर में पूरा करूँगी। पर अब लगता है, मैंने अपने ही सपनों को इस घर की दीवारों में कैद कर दिया है। हैरान होती हूँ कि मेरी दुनिया बस इसी इंसान तक क्यों सीमित रह गई है? क्या मैं कुछ और नहीं हूँ? क्या मेरी कोई पहचान नहीं?

बचपन से ही माँ–पिताजी ने शालीनता और इज्जत की चादर ओढ़ा दी थी। उसी चादर के नीचे दबकर मैं डरपोक और दब्बू बनती गई। अन्याय सहती रही, अपने लिए आवाज उठाना कभी सीखा ही नहीं।

अक्सर जेहन में आता है– मेरे हिस्से ही इतने ऊबड़–खाबड़ रास्ते क्यों? जबकि मुझे गढ़ने वाले को मालूम था कि मेरे पैर बहुत नाजुक हैं। जरा–सा भी सख्त पड़ता है तो छिल जाते हैं, खून रिसने लगता है। इसी दर्द में डूबते–उतराते कई बार मर जाने की भी चाह होती है, पर खुद से मरना भी आसान नहीं। आखिरकार सबकुछ नियति मानकर चलने लगती हूँ।

सुबह–सुबह दरवाजे की घंटी बजी। दरवाजा खोला तो सामने काम वाली बाई शांति खड़ी थी। आँखों में वही रोज वाली हड़बड़ी। "भाभीजी, आज थोड़ी जल्दी है मुझे... बच्चा बीमार है।"

गुस्सा तो आया, पर मैंने कुछ नहीं कहा। हर चौथे दिन वह ऐसा ही कुछ कहकर छुट्टी ले लेती है। मैं चुप रही, दरवाजा खुला रहने दिया और अंदर आ गई। वह भी अनमनी–सी अंदर आई–जैसे अपना मन कहीं और छोड़कर यहाँ चली आई हो। मैंने जानबूझकर कुछ नहीं कहा। ख्याल आया, कितने स्वार्थी हो जाते हैं हम– यह भूल जाते हैं कि मजबूरियाँ इंसान को अपने ही घर में बीमार के पास बैठने की इजाजत नहीं देतीं।

यह सोचते ही मेरा मन पसीज गया। मैंने कहा, "आज घर चली जा, कल काम हो जाएगा।"

शांति बोली, "भाभीजी, हो सकता है कल न आ पाऊँ... इसलिए आज आ गई।"

मैंने गौर से उसकी आँखों में देखा। वहाँ बेचैनी थी—जैसे कोई भारी बोझ उसके कंधों पर टिका हो, जो रुकने का नाम ही न ले। उसने चूल्हे पर चाय रखी, पर ध्यान कहीं और था। मैं खिड़की के पास बैठ गई। बाहर हल्की बारिश हो रही थी— मानो मेरे भीतर की उथल—पुथल को शांत करने के लिए ही अचानक से आई है यह बारिश।

कुछ देर बाद शांति ने चाय मेरे सामने रख दी। उसकी उँगलियाँ काँप रही थीं। इस बार मेरी नजरें नाराजगी से नहीं, बल्कि जिज्ञासा से भरी थीं। मैंने धीमे स्वर में कहा, "शांति, चिंता मत कर। बच्चा जल्दी ठीक हो जाएगा।"

उसने एक पल मेरी ओर देखा, फिर नजरें झुका लीं। "भाभीजी, बुखार है उसको। रात से रो रहा है। डॉक्टर के पास ले जाना है... पर पैसे..." उसकी आवाज टूट गई। उसने जल्दी से आँसू पल्लू में समेट लिए।

मैं चुप रह गई। मेरे अपने दुख मुझे भारी लगते थे, पर शांति की बातें सुनकर मेरे भीतर अजीब सी कंपन होने लगी। मैंने पूछा, "तू... अकेले ही सब संभालती है?"

वह बोली, "क्या करें भाभीजी? मर्द तो है, पर भरोसे लायक नहीं। कभी काम करता है, कभी शराब में डूब जाता है। बच्चे को पालना है तो मुझे ही निकलना पड़ता है। चार घरों में काम करती हूँ। किसी तरह गुजारा हो जाता है।"

उसके शब्द तीर की तरह मेरे भीतर उतर गए—चार घरों का काम, बीमार बच्चा, और शराबी पति... फिर भी वह खड़ी थी, सीधी, मजबूत। मैंने उसका वेतन और कुछ अतिरिक्त पैसे उसे थमा दिए। वह हैरान रह गई— जैसे उसे यकीन न हो कि इस बार मैंने बिना ताने मारे उसे छुट्टी दे दी।

कभी—कभी तो लगता है कि मेरी सारी गतिविधियों का रिमोट उसके हाथ में है : जब वह चाहे, मैं उठूँ, जब वह चाहे, मैं बैठूँ, जब वह चाहे, मैं सो जाऊँ, जब वह चाहे, मैं सन्नाटे में डूब जाऊँ, जब वह चाहे, मैं बोलूँ, जब वह चाहे, मैं उसका मनोरंजन करूँ, और जब वह चाहे, तभी रात को उसका दिल बहलाऊँ। बिना मेरी ओर ध्यान दिए, कितनी निर्दयता से वह मेरी सीमाओं को भेदता है। कभी यह सोचता ही नहीं कि मैं दर्द में हूँ या खुश, न ही कभी मेरे चेहरे को पढ़ने की कोशिश करता है। भूखे भेड़िए की तरह वह एक ही पल में सब कुछ समेट लेना चाहता है। उस क्षण मुझे लगता है, मानो कोई बदबूदार साया मेरे पूरे बदन पर रेंग रहा हो—एक ऐसा साया, जो सिर्फ मेरी देह ही नहीं, मेरी आत्मा को भी कुचल रहा है।

आज पहली बार मैंने शांति पर, उसकी परेशानियों पर गौर किया और यह बात समझ आई कि मुसीबत तले दबकर जान दे देना या बिना लड़े ही हार मान लेना, सबसे बड़ा अपराध है। उसी पल मेरे भीतर से एक गहरी आवाज उठी— "कोई भी समस्या ऐसी नहीं होती जिसका हल न निकले। फर्क बस इतना है कि हमें उसे तलाशने का साहस और उसे झेलने का धैर्य जुटाना पड़ता है।"

उसके जाते ही मैंने अलमारी में सालों से दबे पड़े पुराने सामान खंगालने शुरू किए। अलमारी खोली तो धूल की परतें उड़कर हवा में तैरने लगीं। एक—एक सामान बाहर निकालते हुए लगा मानों मैं अपने ही अतीत की परतें खोल रही हूँ। पुरानी चूड़ियों की खनक, एक मुरझाई हुई चुनरी, पीला पड़ चुका खत—सबको छूते ही दिल की धड़कनें तेज हो गईं।

सबसे नीचे दबा हुआ खजाना निकला— मेरी पुरानी डायरी। धूल झाड़कर जैसे ही खोली, कागज की महक के साथ यादों का दरवाजा भी खुल गया। पन्नों पर लिखी कविताएँ और गीत मुझे ऐसे पुकार रहे थे, जैसे बरसों से किसी कैदी की जुबान पर ताला लगा हो और अब वह अचानक बोलने लगे।

मैंने पन्नों को हल्के हाथों से छुआ और गहरी साँस लेकर डायरी बंद कर दी। जैसे ही वह बंद हुई, एक पुराना सूखा पत्ता बाहर गिर पड़ा। मैंने उसे उठाया— वह पूरी तरह भुरभुरा हो चुका था। फिर आहिस्ता से उसे वापस किताब के बीच दबा दिया और सोचा, "कुछ रिश्ते, कुछ यादें... बस यूँ ही सहेजकर रखनी पड़ती हैं, वरना उनकी खुशबू हवा में बिखर जाती है।''

मैंने तय किया–अब फिर से लिखूँगी। अपने दुख, अपने बंधन, अपनी खामोशी सब इस कागज पर उकेर दूँगी। मेरी कलम अब केवल कलम नहीं रही, वह मेरे लिए नदी बन गई थी। हर शब्द के साथ मैं हल्की होती जा रही थी– जैसे भीतर का बाँध टूटकर बाहर फैल गया हो और उस सैलाब में मेरी घुटन और मेरा दर्द बहते चले जा रहे हों।

मेरे पति को बाहर काम करने वाली दूसरी स्त्रियाँ बहुत अच्छी लगती हैं लेकिन मैं बाहर काम करूँ, यह उसे मंजूर नहीं। एक दिन संकोच करते हुए मैंने कहा कि मैं भी कुछ काम शुरू करना चाहती हूँ। वह भड़क गया– ''घर के काम तुमसे ढंग से होते नहीं, कुछ और काम क्या खाक करोगी?''

उसके शब्द तीर की तरह चुभे। दिल में आया कहीं दूर भाग जाऊँ, मगर जाती कहाँ? इतनी हिम्मत अभी मुझमें नहीं आई थी। कई बार सोचती, कोई काम शुरू करूँ, पर अकेले की लड़ाई आसान नहीं होती। हर विचार अमल से पहले ही धराशायी हो जाता। तब लगता, शांति मुझसे कहीं बेहतर है। कम से कम अपनी मर्जी से जी तो रही है।

इस समय शांति मेरे लिए एक मार्गदर्शिका बन गई थी। पति जब कहता कि ''तुमने अपनी हैसियत और गिरा दी है, अब उस शांति से भी तुलना करने लगी हो!''

अक्सर जेहन में आता है– मेरे हिस्से ही इतने ऊबड़–खाबड़ रास्ते क्यों? जबकि मुझे गढ़ने वाले को मालूम था कि मेरे पैर बहुत नाजुक हैं। जरा–सा भी सख्त पड़ता है तो छिल जाते हैं, खून रिसने लगता है। इसी दर्द में डूबते–उतराते कई बार मर जाने की भी चाह होती है, पर खुद से मरना भी आसान नहीं। आखिरकार सबकुछ नियति मानकर चलने लगती हूँ।

तब भी मैं उसकी बातों पर अमल नहीं कर पाती। बेशक हमारी परिस्थितियाँ अलग थीं, पर दुख और जद्दोजहद के स्तर पर हम दोनों औरतें थीं–एक जैसी। रात देर तक जागते हुए अचानक ख्याल आया–हम सब औरतें किसी न किसी पिंजरे में कैद हैं। फर्क सिर्फ इतना है कि किसी के पिंजरे पर सुनहरी जाली चढ़ी है और किसी का जंग खाया हुआ है।

रात गहराती गई। कमरे की दीवारें अचानक और तंग लगने लगीं। लगा जैसे हवा भी बंधक बना दी गई हो। मैं भी अपनी मुक्ति के लिए जोर से छटपटा उठी। उस क्षण मुझे पहली बार एहसास हुआ–शायद फर्क सुनहरी जाली या जंग खाई सलाखों का नहीं, फर्क सिर्फ इतना है कि कोई चुपचाप सह लेता है और कोई दरवाजा खटखटाने की हिम्मत करता है।

मैं खिड़की बंद करके बिस्तर पर लौट आई, पर नींद नहीं आई। मन ही मन तय किया–कल से मैं एक नई सुबह की शुरुआत करूंगी।

सुबह पति के जाते ही मैं तैयार हो गई, अपने लिए ऐसे दरवाजे की तलाश में, जो मुझे और मेरे अस्तित्व को स्वीकार करते हुए भीतर आने का स्वागत कर सके।

मैंने आखिरी बार कमरे की ओर देखा। वह कमरा, जहाँ दीवारें भी मेरी चीखों से अनसुनी रही थीं। मैंने धीरे से मोबाइल उठाया और उसे छोटा–सा संदेश लिख दिया– ''अब और नहीं। यह घर अब पूरी तरह से तुम्हारा है, मेरी कैद खत्म हुई।''

काँपते हाथों से मैंने दरवाजा खोला और बाहर निकल गई। बरामदे में धूप चारों ओर बिखरी हुई थी। लगा मानो उसका एक टुकड़ा मेरे भीतर भी उतर आया हो, जिसकी गर्माहट से मेरा विश्वास और दृढ़ हो गया। भीतर अंधेरे को चीरती रोशनी फूट रही थी। मैं जानती थी, बाहर कठिनाइयों और अनिश्चितताओं की लंबी सड़क है– न नौकरी तय थी, न ठिकाना। लेकिन भीतर रहना अब मौत से भी बदतर था। मैं बिना पीछे देखे कदम आगे बढ़ाती गई। हर कदम पर दिल कह रहा था– ''कभी लौटकर पीछे म देखना।''

पीछे वही घर था, जो मुझे रोज तोड़ता था। और आगे–भले अजनबी दुनिया हो, पर उसमें मेरे बचे होने की गुंजाइश थी। उस दिन मैंने जाना–छोड़कर जाना हमेशा हार नहीं होती। ◆

पता : 216 ए, ग्रीन अपार्टमेंट, राजौरी गार्डन,
नई दिल्ली–110027
मो. : 7678499818

केंचुआ

❑ डॉ. सुषमा गुप्ता

हल्के नीले रंग का सूती पजामा, उसी रंग की कमीज, गले में पहनी गहरे नीले रंग की पट्टी में लटकता पहचान पत्र। जिसे हताशा से देखते हुए उसने बैग से पानी की बोतल निकाली। घूँट भर पानी पिया फिर चुल्लू भर, आँखों पर छींटे मारने लगी। आँखें जो पहले से गीली थी। उसकी देह में हल्की कंपन दूर से भी साफ महसूस की जा सकती थी। उदासी उसके चेहरे से यूँ झर रही थी जैसे पतझड़ में मुरझा कर पेड़ से पीले पत्ते झरते हैं। पर पीले पत्ते झर जाएँ तो पेड़ पर नई कोंपलें आती है, यहाँ रोज सिर्फ पीले पत्ते ही होते, बार–बार लगातार। घोर उदासी और निराशा के।

उसकी नजर सामने ठहर गई। फुटपाथ पर कीचड़ था। कीचड़ में केंचुए रेंग रहे थे। उनमें से एक केंचुआ उसी की तरफ बढ़ रहा था। अचानक उसे लगा केंचुआ बड़ा होता जा रहा हैं। उसका पसीना बढ़ने लगा। हथेलियों में कंपकंपी आने लगी। उसे लगा वह उठ कर भाग जाए पर उसकी देह जड़ हो गई। उसके डर का स्वरूप विकराल होता जा रहा था और उसकी अपनी साँस धीमी, तभी किसी ने फुटपाथ पर बाइक चढ़ाई और उस केंचुए को रौंदता हुआ निकल गया।

वह अवाक् देखती रह गई...कुछ पल सुन्न बैठे रहने के बाद उसने पानी की बोतल का ढक्कन लगाया। कांधे पर टंगे बैग में बोतल रखी, अपनी घिसी हुई चप्पलों में पैर डाले और थके कदमों से बस–स्टैंड की तरफ बढ़ गई। जिस अस्पताल के बाहर वह इस समय बेंच पर बैठी थी, यहाँ वह कुछ सालों से सपोर्ट स्टाफ का काम कर रही है। सपोर्ट स्टाफ जो वार्ड की रख–रखाव और मरीजों की देखभाल में मदद करते हैं।

वह जो इस वक्त मरणासन्न दिख रही थी, अस्पताल के वार्ड में हमेशा चेहरे पर मुस्कान चिपकाए रखती है। प्राइवेट अस्पताल में सपोर्ट स्टाफ भी भली शक्ल वाला रखा जाता है ताकि मरीज को उन्हें देखकर अच्छा महसूस हो। 'रोनी सूरत वालों की यहाँ कोई जगह नहीं', ऐसा हेड नर्स कई बार उसे लगभग धमकाते हुए कह चुकी है। हालाँकि उस हेड नर्स को पूछना यह चाहिए था कि रोशनी तुम्हारा चेहरा इतना बुझा क्यों है? पर ऐसा उसने कभी नहीं पूछा। कहते हैं कि पुरुष स्त्रियों की परिस्थितियों को कभी नहीं समझ सकते। पर उससे भी बड़ा प्रश्न यह है, क्या स्त्रियाँ अपने साथ काम करने वाली दूसरी स्त्रियों की परिस्थितियों को तवज्जो देती हैं! या वही सदियों पुराना जुमला आगे भी सदियों तक चलता रहेगा कि हमने सहा

है तो तुम भी सहो रानी कि जब हम नहीं मरे तो तुम कौन सा मर जाओगी।

रोशनी की रात की ड्यूटी थी। जब–जब रात की ड्यूटी होती, वह सुबह घर जाकर मार खाने के लिए खुद को पहले ही तैयार कर लेती। नौकरी वह छोड़ नहीं सकती थी। पति घर में कुछ देता नहीं था। शराब, बिस्तर, जुआ बस यही उसकी दिनचर्या थी।

रोशनी की हजार मिन्नत के बाद भी उसे हफ्ते में दो–तीन बार नाइट ड्यूटी करनी ही पड़ती। तब रोशनी का पति उस पर लानत मलानत भेजने में कोई कसर नहीं छोड़ता कि सब बहाने हैं, वह रात–भर अपने आशिकों के साथ घूमती है। जिंदगी की एक विडम्बना यह भी है कि लोग उन बात का आरोप सामने वाले पर लगाते हैं जिन कामों में वह खुद लिप्त रहते हैं। उनके अपने डर, उन्हें शक से भरे रखते हैं और उस शक का जुर्माना वह दूसरों की देह,मन और मान से वसूलते हैं।

रोशनी का दस साल का बेटा है जिसकी पढ़ाई का खर्च और घर के हर खर्च का भार भी उसी के कंधों पर है। पति तो जब कभी जुए में बहुत जीत जाता तो थोड़ा बहुत दे देता पर ऐसा दिन, न के बराबर आता। अधिकाँश समय तो उसकी नजर रोशनी की तनख्वाह पर रहती। रोशनी गिड़गिड़ाती कि बच्चे की फीस भरनी है, घर चलाना है पर इस नानुकुर पर वह उसे बेरहमी से मारता। वैसे मारपीट करने के लिए उसे किसी वजह की जरूरत नहीं थी। जब कभी मूड खराब हो, जुए में हारा हो, किसी से गाली–गलौच हुई हो, सब बातों का गुस्सा रोशनी पर ही उतरता। और जब रोशनी नाइट ड्यूटी करके आती, उस वक्त अगर वह उठा हुआ है तब तो रोशनी का मार खाना तय था। रोशनी ने बहुत चाहा कि किसी रोज डंडा उठाकर तबीयत से वह भी उसको सूत दे, पर उसके इस मंसूबे में दो अड़चन थीं। पहली यह कि अपने पति के मुकाबले वह देह में काफी कमजोर थी, और दूसरी वजह यह कि उसकी परवरिश की ही ऐसे गई थी कि न उसे जुबान चलाना आता था ना हाथ। सो जाहिर है उसके मंसूबे सदा दिमाग में ही कुलबुलाकर रह गए, हकीकत के धरातल पर कभी नहीं उतरे।

आज से ग्यारह साल पहले रोशनी की विधवा माँ ने अपनी हैसियत अनुसार उसकी शादी की थी। गाँव वालों ने उसकी किस्मत को सराहा, बड़े शहर में शादी हो रही है ऐश करेगी लड़की। शादी के बाद हालात कुछ और ही निकले। उसने दबी जुबान में कई बार अपनी माँ को कहा पर हर बार उसे डाँट दिया गया कि जैसे–तैसे निभा लो। घर आकर बैठ गई तो इन छोटी बहनों से शादी कौन करेगा! धीरे–धीरे माँ ने तो जैसे उसके लिए दरवाजे ही बंद कर लिए। रोशनी ने भी मायके जाना छोड़ दिया।

अब कहाँ होता है ऐसा! जैसे नारे झाड़ने वाले अगर जमीनी स्तर पर जाकर आँख–कान खोलेंगे तब दस में से आठ घरों का उन्हें यही हाल मिलेगा। जहाँ सुखी बेटियों के लिए तो दरवाजे खुले हैं पर दुःख उठाती बेटियों का आना घर वालों को सिरदर्द से ज़्यादा और कुछ नहीं है।

जब भाग्य बंटने के समय आप सबसे आखिरी पंक्ति में खड़े हो तो अक्सर नंबर आने से ठीक पहले भी पैर फिसल सकता है। वही रोशनी के साथ हुआ। उसे शादी के शुरुआती दिनों में ही दिन चढ़ गए थे। दो–चार फिल्में जो उसे याद थी उन्हीं की बिना पर उसने अपने अंदर उम्मीद की लौ जलाई कि एक दिन वह प्यार समर्पण से सब कुछ ठीक कर लेगी। पर ऐसा सिर्फ किताबों, फिल्मों में होता है जनाब। हो सकता है असल जिंदगी में भी, हजार में से एक जगह ऐसा हो जाता हो, पर यहाँ पर ऐसा होने की कोई गुंजाइश नहीं थी। अब तो यह हाल था, वह जितना झुक कर पेश आती, उसे उतना ही जूते की नोंक पर रखता जाता।

बेटा पैदा हुआ तो निखट्टू बाप इसे अपनी उपलब्धि मान मोहल्ले पर में इतराया। पर चार दिन बीतते, उसके आचरण में वही ढाक के तीन पात वाला मुहावरा लौट आया। पहले सिर्फ रोशनी पिटती थी फिर नन्हा बेटा जब कभी उसके लात–घूंसे के बीच पड़ा, तब वह भी बुरी तरह पीटा।

रोशनी कोशिश करती कि बेटा, बाप के सामने आए ही नहीं पर मजबूरी की नौकरी, ऐसे सहूलियत भरे विकल्प उसके पास भला कैसे छोड़ती! तो जाहिर बात है धीरे–धीरे बेटे की नजर में भी पिता एक डरावना हैवान बन चुका था।

वह केंचुआ तो बाइक के नीचे कुचला गया पर रोशनी के जेहन में वह जिंदा लिजलिजा उसकी तरफ अब भी बढ़ रहा था।

सुबह के साढ़े छः बज चुके थे। वह धीरे–धीरे चलती हुई थके कदमों से घर पहुँची। उसने दरवाजे में चाबी लगा धीरे से घुमाई। काँपते पैरों से अंदर कदम रखा। बाहर वाले कमरे में बेटा सोफे के पास अपनी किताबों पर ही सोया था। शायद रात को पढ़ते–पढ़ते सो गया था। उसने एक नजर बेटे को देखा फिर पीछे के कमरे की तरफ गई। कमरे का दरवाजा खोलते ही शराब का तेज भभका आया। जमीन में पड़ी हुई बोतल पैर से छूते ही लुढ़कती चली गई। रोशनी

का जैसे दम निकल गया। ऐसा ना हो, आवाज से यह सोया दानव उठ जाए। पर वह नहीं उठा। हाँ उसने करवट जरूर ली। उसके पसरे हुए शरीर को देखते हुए अचानक उसे कीचड़ में सना केंचुआ याद आया। रोशनी ने कसकर आँखें बंद कर ली। वह धीरे से दो कदम पीछे हटी और बाहर आ गई।

उसने कुछ दिन पहले ही एक पुराना मोबाइल बेटे को दिलाया था। पति पर उसे रत्ती भर भरोसा नहीं था कि ऐसा ना हो, उसके पीछे से बेटे को ही कुछ कर दे! अस्पताल में साथ काम करने वाली एक जूनियर केयरटेकर से कुछ पैसे उधार लेकर उसने इस पुराने मोबाइल का इंतजाम किया था। इस सामाजिक लेनदेन के कारोबार में एक तथ्य बड़ा दिलचस्प है कि आपके साथ वाले अधिकांश समय ईर्ष्या की वजह से आपकी मदद करते नहीं, आपसे ऊपर के ओहदे वाले आपको कुछ समझते नहीं, यहाँ तक की इंसान भी नहीं। पर जो नीचे के स्तर पर काम कर रहा है अक्सर वह आपकी तकलीफ समझ कर आपकी मदद करने को आगे आ जाता है।

खैर, वह मोबाइल भी उसके बेटे के सिरहाने ही रखा था। उसने बेटे को उठाने के लिए हाथ बढ़ाया कि तैयार करके स्कूल भेजे पर जाने क्या सोचकर उसने पहले वह मोबाइल उठा लिया। ऑन किया तो उस पर कुछ तस्वीरें खुली हुई थी। उसकी आँखें एकदम से फैल गई। वह तेजी से मोबाइल स्क्रोल करने लगी। उसने सर्च हिस्ट्री देखी। अब तो उसकी आँखों के आगे अंधेरा छाने लगा। उसे लगा जैसे अभी उसके दिल की धड़कन रुक जाएगी। उसके पैरों ने उसका साथ देने से इनकार कर दिया। वह धीरे–धीरे झुकी और वहीं जमीन पर लेट गई। दस मिनट वह ऐसे पड़ी रही जैसे श्मशान में कोई अधजला मुर्दा। जिसकी दयनीय हालत का कोई ठौर ही नहीं।

पड़े–पड़े वो सोनू को देखते रही। इस दुनिया की लगभग हर माँ एक ऐसी अदृश्य शक्ति संजोए हैं, जहाँ बात बच्चे की भविष्य की आती है, वहाँ उसके अध–मृत शरीर में अपने–आप प्राण लौटने लगते हैं।

उसने खुद को जैसे–तैसे संभाला, सोनू का मोबाइल बंद किया और दोबारा उसके सिरहाने रख दिया।

दस साल के सोनू ने उससे जिद करके कुछ समय पहले इंटरनेट पैक डलवा लिया था। यह कहकर कि उसे पढ़ाई के लिए जरूरत है। वह इसके लिए राजी नहीं थी पर बच्चे आजकल जाने कैसे–कैसे जाल फेंक कर यह यकीन दिला ही देते हैं कि बिना फोन के पढ़ाई संभव नहीं है। खैर स्कूल भी तो इस प्रवृत्ति के हो चुके कि उम्मीद करते हैं जिसके घर में खाने को भी नहीं होगा उसके घर में इंटरनेट जरूर होना चाहिए। होमवर्क ही ऐसा देते हैं। इन्हीं सब बातों को सोचकर उसने वह इंटरनेट पैक डलवा दिया था। उसे कहाँ अंदाजा था कि ऐसा कुछ होने वाला है!

रोशनी खुद को संभालते हुए वापस रसोई में गई। फिर एक बार मुँह धोया। एक गिलास पानी पिया, लंबी साँस ली और आकर अपने बेटे को उठाया।

बाकी दिन बिल्कुल वैसे ही बीता जैसे हर दिन बीतता है। बेटे को स्कूल भेज, घर के सब काम किए। बारह बजे तक उसका नवाब पति उठा। उठते ही गालियों की बौछार, गंदे लाँछन कि रात रंगरलियाँ मना आई अपने आशिकों के साथ और भी न जाने क्या–क्या बकता रहा। वह चुप सुनती रही। जानती थी कि एक भी शब्द मुँह से निकला तो बहुत बुरी तरह उसे मारा–पीटा जाएगा।

उसने बहुत बार सोचा कि पुलिस कंप्लेंट कर दे। एक बार शुरू में की भी थी। पुलिस बस उसके पति को चेतावनी देकर चली गई। जिसका बदला उसने बाद में उसे और ज्यादा पीट कर निकाला। पड़ोसन ने तब समझाया, शिकायत पर पुलिस दो–चार दिन अंदर कर भी देगी तब वह जब लौट कर आएगा, वह खुद को कैसे बचाएगी! एक डर और भी समाज ने उसके अंदर बो दिया था कि अकेली औरत को सब बदचलन समझते हैं। उस पर हाथ डालने को तैयार रहते हैं। जैसा भी है तेरा पति घर में साथ है तो तू बाहर के दानवों से बची हुई है। रोशनी ने भी इसे ही अपनी किस्मत मान लिया था। बेटा इस मारपीट पर जब कभी सवाल करता वह उसे भी समझा–बुझाकर चुप कर देती। पर वह देख रही थी कि रात दिन उसके बेटे का गुस्सा भी बढ़ता जा रहा है।

उसने चुपचाप खाने की थाली पति के आगे रखी। पति ने गाली बकते हुए दाल चावल में अँगुलियाँ घुसा दी। रोशनी को फिर लगा कि चावल में केंचुए चल रहे हैं। उसने फिर से आँखें बंद की और पीछे हट गई। जैसा कि हमेशा होता है, उसने खाया, गुर्राया और घर से निकल गया। थकी हारी रोशनी बिस्तर पर कटे पेड़ की तरह गिर गई। रात भर की जगी थी फिर भी नींद नहीं आ पाई। बेटे के मोबाइल पर देखी वीभत्स तस्वीरें उसकी नजरों के सामने कौंधने लगी। वह घबराकर उठ बैठी। मन का विचलन संभालने के लिए उसने टीवी चला लिया। पर..

टीवी के हर चैनल पर एक ही खबर। नीला ड्रम।

टुकड़ों में मिला शरीर। पति की हत्या। पत्नी फरार। हर न्यूज चौनल की अपनी टैगलाइन। वह बेचैनी से चैनल पलटते हुए बुदबुदाने लगी, "आए दिन स्त्रियों की हत्या कर दी जाती है। बलात्कार, दहेज, घरेलू हिंसा और भी न जाने किस–किस बात के लिए। तब कोई सुध नहीं लेता। एक आदमी मार दिया किसी स्त्री ने तो सारे चैनल पगला गए हैं।" उसने अपनी घोर बेचैनी और बड़बड़ में ध्यान ही नहीं दिया कि बेटा कब स्कूल से लौटा और ठीक उसके पास खड़ा टीवी देख रहा है। ''बदल क्यों दिया आपने चैनल? मुझे देखना था कि उसने उसे कैसे मारा।'' रोशनी चौंककर ऐसे उछली जैसे तेज करंट लगा हो।उसने घबरा कर टीवी बंद कर दिया। "यह फालतू की चीजें तेरे देखने की नहीं है तू तो पढ़ाई में दिमाग लगा।"

"वही तो करता हूँ सारा दिन। बचे हुए दिन या तो आप डाँटती रहती हो या वह अंदर पड़े गाली देते रहते हैं। और है क्या मेरे पास करने को!" कहकर तुनकता हुआ सोनू अंदर चला गया सकपकाई सी रोशनी कुछ देर वहीं बैठी रह गई। फिर सोफे से उठते हुए, उसने वहीं से बेटे से लाड़ जताते हुए प्यार से हाल–चाल पूछा और खाना लगाने रसोई की तरफ बढ़ गई। सोनू स्कूल का बैग कमरे में पटक कर वापस बाहर आया और उसने दोबारा टीवी खोल लिया। अब वह न्यूज सुन रहा था। रोशनी तेजी से रसोई से बाहर आई और टीवी बंद कर दिया। बेटे ने माँ को गुस्से से देखा पर इस बार कुछ कहा नहीं। घर का माहौल जब एक इंसान की वजह से खराब हो तो बाकी लोगों के बीच में भी तनाव धीरे–धीरे खुद पनपने लगता है। रोशनी ने सुबह उसके मोबाइल पर जो तस्वीरें देखीं, वे गला काट देने की थी। सर्च हिस्ट्री में वह ढूँढ रहा था कि गले को कहाँ से काटा जाए जिससे सामने वाला शख्स बच ना पाए। वह उसी वक्त समझ गई थी कि उसके दिमाग में क्या चल रहा है। कौंध तो उसके मन में भी यही सब रहा था। लेकिन...दोनों माँ बेटे के बीच में दिनभर अजीब सी खींचतान रही। शाम ढले तेज बारिश शुरू हो गई तूफान के साथ। एक घंटे खूब मूसलाधार बारिश हुई, आसमान से भी और रोशनी की आँखों से भी। जिया हुआ जीवन, दृश्य–दृश्य कर उसकी आँखों के सामने से गुजरता रहा। वह खुद से पूछ रही थी कि आखिर उसने कहाँ गलती कर दी! आखिर उसके हाथ में क्या था! क्या उसे रास्ता बदल लेना चाहिए था!अब तक अपने ऊपर उसने बहुत कुछ सह लिया पर सोनू को इस तरह कैसे वह गलत दिशा में जाने देती! वह समझ रही थी कि अब समय आ गया है कि उसे कोई न कोई कड़ा निर्णय लेना ही पड़ेगा। उसने पलट कर सोनू की तरफ देखा। सोनू दरवाजा खोलकर फर्श पर बैठा बाहर बारिश देख रहा था। उसने ध्यान ही नहीं दिया कि बाहर की मिट्टी में से निकलकर बहुत से केंचुए अब उसके शरीर के आसपास फैल चुके हैं। जैसे ही रोशनी की नजर इस दृश्य पर पड़ी, वह सिहर गई। उसने तेज गति से चप्पल उठाई ताकि उन सब केंचुए को मार सके। उसका हाथ हवा में ही था कि तभी तेज बिजली कड़की। रोशनी ठिठक गई।

वह कुछ देर जड़ खड़ी रही। कभी सोनू को, कभी केंचुओं को देखती रही। उसने सोनू को वहाँ से उठ जाने को कहा। और इस बार चप्पल नहीं, वह बड़ी सी झाड़ू लाई और उसने सारे केंचुएँ घर के बाहर निकाल दिए। केंचुओं को बाहर खदेड़ते हुए अब रोशनी मुस्कुराने लगी। उसने अपने बेटे को पलट कर देखा। बेटे को माँ की मुस्कान का कारण समझ नहीं आया। उसने इशारे से पूछा, "क्या?" रोशनी ने मुस्कुराते हुए कहा, "कुछ नहीं। तू खाना खा और अच्छे से पढ़ाई कर। तुझे एक दिन बड़ा आदमी बनना है। तू और मैं आने वाली जिंदगी अच्छी बिताएँगे, किसी अपराध की सजा काटते हुए नहीं।"

माँ की बात पर बेटा अचकचा गया। ठीक–ठीक बात तो उसे समझ नहीं आई पर वह इतना तो समझ गया कि शायद माँ ने उसका मोबाइल देखा है। उसने सिर झुका लिया। वह लौट कर कमरे में गई। अलमारी में छुपा कर रखे, तलाक के कागज बाहर निकाल लिए। उन कागजों के बीच में एक पता भी था। एक ऐसी भली महिला का जिसकी अस्पताल में उसने बहुत सेवा की थी। जिसने उसे आश्वासन दिया था कि अगर वह थोड़ी भी हिम्मत करेगी इस नर्क से बाहर निकलने की तो वह उसका पूरा साथ देंगी। उसकी नौकरी, रहने और सुरक्षा सब का इंतजाम कर देंगी। बस उसे इस वहम से बाहर आना होगा कि अकेली औरत अपने बलबूते पर समाज में जी नहीं सकती। गलत को गलत कहना और गलत के खिलाफ खड़ा होना कितना जरूरी है। आज रोशनी की समझ में आ गया था बात सिर्फ उसकी ही नहीं है, गलत निर्णयों का नतीजा आने वाली पीढ़ियाँ भी झेलती हैं। रोशनी ने हाथ में थामे कागजों को एक नजर देखा, गहरी साँस ली और अपने मोबाइल में उस भद्र महिला का नंबर खोजने लगी। ◆

पता : 327/16ए, नेहरू कॉलेज रोड, फरीदाबाद–121002
मो. : 9899916431

जाना जरूरी है क्या...!

❑ डॉ. रंजना जायसवाल

"दिल्ली से लखनऊ की हवाई यात्रा मात्र एक घण्टा बीस मिनट की ही तो है। जब चाहेगा तब आ जाएगा।"

पापा ने यही तो कहा था, इन बीते वर्षों में उसने न जाने कितनी बार दुगने–चौगुने पैसे देकर टिकट खरीदा था सिर्फ घर पहुँचने के लिए.. रहने को तो वो दिल्ली के पॉश इलाके में एक मकान में रहता था पर वह टू बी एच के का मकान जो शुरू होने से पहले कब खत्म हो जाता था सिर्फ ईंट–गारे का मकान ही बना रहा। मकान से घर बनने की यात्रा वह कभी तय ही नहीं कर पाया था। वह अक्सर सोचता था कि माँ ठीक कहती है घर इंसानों से बनता है, उस मकान में इंसान के नाम पर कोई था तो सिर्फ वह और उसके फर्नीचर...सच कहूँ तो वह वक्त के साथ फर्नीचर होता जा रहा था जो एक वक्त के बाद सिर्फ होते हैं।

तीन अटैचियाँ, दो एयर बैग से भरे सामान पर उसने नजर डाली। हर बैग में कपड़ों से ज्यादा बीते सालों की थकान थी। वह लौट रहा था अपने शहर, अपने घर हमेशा के लिए... उसने खिड़की के पर्दे एक तरफ सरका दिए। ट्रेन पटरी पर तेजी से दौड़ी जा रही थी उसके साथ दौड़ रहे थे खेत–खलिहान और पेड़–पौधे उसने घबराकर नीले रंग के पर्दे खींच दिए। उसने अपने आप से कहा, "बस, बस अब और नहीं..." ऑफिस की वह आखिरी मीटिंग चलचित्र की तरह उसकी आँखों के आगे से गुजर गई थी। सब हँस रहे थे, खिलखिला रहे थे। कम्पनी का रेस्पॉन्स इस साल बहुत अच्छा गया था। अखिल चाहकर भी हँस नहीं पा रहा था, उसकी हँसी उसके भीतर कहीं अटक गई थी। सामने स्क्रीन पर ग्राफ बढ़ रहे थे, लेकिन उसके भीतर कुछ गिर रहा था, टूट रहा था। बस अब और नहीं, उसी रात उसने टिकट बुक की थी...बिना किसी को बताए!

जीवन की भाग–दौड़ से वह तन–मन से थक चुका था। उंगलियों में फंसी किताब उसकी गोद में लुढ़क चुकी थी, उसकी आँखें बंद थी पर वह कुछ भी सोचने की स्थिति में नहीं था। गोद में पड़ी ऐश्वर्या शर्मा की किताब की पंक्तियाँ उसके जेहन में कहीं अटक गईं थीं।" मरने से पहले कम से कम एक बार हम सभी को लौटना चाहिए हर उस जगह पर जहाँ छोड़ आए थे हम अपना कोई साथी कोई चीज कोई किस्सा या हमारा अपना ही कोई हिस्सा..!!"

माँ का चेहरा उसकी आँखों के सामने से गुजर गया।मॉ ने भीगी आँखों से कहा था। "लौट आ अखिल, तेरे पापा तो कभी कुछ नहीं कहेंगे पर मैं जानती हूँ हम तेरे बिना बिल्कुल अकेले पड़ गए हैं। थोड़ा कम भी कमाएगा तो हम तीनों के लिए पर्याप्त होगा। कम से कम एक साथ तो होंगे।"

माँ के उस आंसुओं से भीगे चेहरे ने उसे उस रात सोने नहीं दिया था पर दूसरे दिन माँ फिर पूरे जोश के साथ घर–गृहस्थी के कामों में जुट गईं थीं। लगता ही नहीं था एक दिन पहले इसी माँ की आँखों में आग्रह था, याचना थी, उसकी आँखें सावन–भादों हो रहीं थीं।

"माँ आप ठीक तो हैं न...?" अखिल ने आगे बढ़कर पूछा था "बिल्कुल, तू यहाँ की चिंता न कर, हम सब मजे से हैं।" यह कहते–कहते उनकी आँखें फिर बरस पड़ी थीं।" "पर माँ !" वह कहना चाहता था, तुम्हारी आँखें तो कुछ और कह रहीं हैं पर शब्द कहीं अटक जाते और जबान तालु से चिपक जाते। "तेरी माँ की आँखों का परनाला फिर खुल गया।"

पापा हंसते हुए कहते। माँ भरसक मुस्कुराने का प्रयास करती पर अपने दिल में बिखरे दर्द को चेहरे पर आने से रोक नहीं पातीं। दर्द चुपके से अखिल के सामने उनकी चुगली कर ही देता। अखिल भी अपने उस हिस्से की ही तलाश करने के लिए लौट आना चाहता था पर क्या उसका लौटना इतना आसान है उसने अपने आप से पूछा! पर आज नहीं तो कल उसे लौटना ही है। फिर आज क्यों नहीं...! लौटना! इसमे इतना सोचने जैसा क्या था! उसके माता–पिता को उसकी जरूरत है कल को कोई बात हो गई तो वह अपने आप को जिंदगी भर माफ नहीं कर पाएगा। वैसे भी अपने घर, अपने शहर, अपने माता–पिता के पास लौटने के लिए इतना सोचने की भला क्या जरूरत है।

कुछ सोच कर उसके चेहरे पर एक मीठी सी मुस्कान आ गई।माँ दिल्ली वापस लौटने की एक रात पहले उसके कमरे में सोने की जिद्द जरूर करती। "बड़ा हो गया वह... प्राइवेसी भी कोई चीज होती है।" पापा मम्मी को समझाने का निरर्थक प्रयास करते पर माँ सुन कर भी अनसुना कर देती। जैसे पापा की आवाज उन तक पहुँच ही नहीं रही हो।

"मुझे किचन में कितनी भी देर हो जाए मेरा आँचल पकड़े इसे नींद नहीं आती थी।" "क्या माँ आप भी क्या बातें लेकर बैठ गई हो। वह बचपन की बातें हैं, अब मैं बड़ा हो गया हूँ।" वह झेंप के साथ झुंझला भी जाता। उसकी झुंझलाहट देख माँ एक पल को उदास हो जाती। "अखिल, तेरे जाने के बाद यह कमरा सूना हो जाएगा और इस कमरें में आने के बहाने भी खत्म हो जाएंगे।" ठीक ही तो कहा था माँ ने...उसके आने की खबर से सिर्फ माँ ही नहीं ये घर भी चहकने लगता था। माँ उसके कमरे में आने के बहाने ढूंढतीं रहतीं। "अखिल, तेरी शर्ट प्रेस करके अलमारी में टांग दी है, नए मोजे दराज में रखे हैं। पोहे खाएगा या सेवई!"

और वो कहता "कुछ भी बना लो माँ, मैं सब कुछ खा लूँगा।" "कुछ भी! कुछ भी कैसे, हालत तो देख अपनी! चुचका छुहारा हो गया है। वहाँ ऑफिस में तो उबला–फीका खाता ही होगा। कामवाली को भी सिर्फ पैसे से मतलब है, वो कौन सा रच–रच कर बनाती होगी। कम से कम यहाँ तो अपनी पसन्द का खा, मैंने यू ट्यूब से दो–तीन नई डिश सीखी है। तेरे बहाने हम भी खा लेंगे।"

माँ बिना रुके एक बार में बोल जाती। इन उंगलियों में गिनती के दिनों में उनका मातृत्व हिलोरें मारता रहता। वह मातृत्व के अथाह सागर को उस पर उड़ेल देना चाहती थी। माँ की खातिर वह हर चीज खाने को तैयार हो जाता। इन बीते सालों में बाहर रहने की आदत कुछ इस तरह से पड़ गई थी कि वह स्वाद को लेकर बिल्कुल सुन्न हो चुका था। शुरू–शुरू में माँ के हाथों की खाने की बड़ी याद आती थी, खाना गले से नहीं उतरता था पर वक्त के साथ उसने स्वाद और अपनी इंद्रियों के साथ समझौता कर लिया था।

"माँ हॉस्टल का खाना बहुत गंदा होता है। वो पानी जैसी दाल जिसमे पीले रंग के अलावा कुछ नहीं होता। उबली सब्जियाँ जिसे देखकर ही मन न जाने कैसा–कैसा हो जाता है।"

"खाने के लिए ऐसा नहीं कहते, माँ अन्नपूर्णा का आशीर्वाद है। तुम्हें भरपेट भोजन तो मिल रहा। यहाँ तो हजारों–करोड़ों लोग रोज भूखे पेट ही सो जातें हैं।"

"पर...!"

"पर–वर कुछ नहीं।" माँ अपने तर्कों से अखिल को शांत कर देती। माँ अक्सर अपनी सहेलियों से कहती थी, "रसोई तो बच्चों और पुरुषों से होती है, औरतों का क्या है कुछ भी बनाकर खा लेतीं हैं।"

वक्त बीतता रहा पर अखिल वहीं का वहीं खड़ा था। दिल्ली के उस पॉश इलाके में बना उसका मकान जो महंगे फर्नीचर, झूमर और मॉड्यूलर किचन के बावजूद सिर्फ मकान ही बना रहा कभी घर बन ही नहीं पाया था। यह शहर मशीनों का शहर था। इंसान भी मशीन की तरह काम करते थे। इस मकान में रहने वाले लोग भी इंसान कहाँ थे सिर्फ

एक मशीन भर ही तो थे।काम वाली आती,

"भैया क्या खाएंगे?" "जो तुम्हारा मन हो बना लो।" कभी–कभी वह सोचता खाना उसे था और वह उससे कहता कि जो तुम्हारा मन हो बना लो। वो पलट कर देखता तब तक वह उसके जवाब का इंतजार किए बिना ही अपने काम में जुट जाती। झूमर से लगे ब्लू टूथ से फोन को अटैच कर वो अपने पसन्द के गाने लगा काम करती रहती। शुरू–शुरू में यह सब उसे अटपटा और अजीब लगता था पर वक्त के साथ उसने समझौता कर लिया था। कम से कम कोई तो इस झूमर का सही इस्तेमाल कर रहा है।

"भैया नाश्ता बन गया है।"

उसकी तीन सौ पैंसठ दिन एक सी आवाज उसके एक से स्वाद वाले खाने की तरह ही थी। दिल्ली के शुरुआती दिनों में घर का खाना खाने की ललक ने उसे फ्लैट में रहने को मजबूर कर दिया था। माँ ने भी कहा था "घर का खाना घर का ही होता है, इतनी मेहनत करता है ढंग का खाना भी न मिले तो क्या फायदा!"

फायदा तो तब भी न हुआ था। पहली बार काम वाली के हाथ का खाना खाकर उसे अपने स्कूल मेस की याद आ गई थी। बिल्कुल वैसा ही स्वाद, न नमक, न मिर्च बस एक खानापूर्ति...सब अपने अपने हिस्से का काम कर रहें थे बस काम, कोई भाव नहीं कोई जिम्मेदारी नहीं।

बचपन में सुना था किसी चीज को इक्कीस दिन तक रोज करो तो उसकी आदत पड़ जाती है पर इतने सालों से वह यही खाना तो खा रहा था फिर भी उसकी आदत नही पड़ पाई थी? वह यह बात आज तक समझ नहीं पाया था। जब पापा ने उसे हॉस्टल भेजा था तब वह कहना चाहता था,माँ आपके आँचल के बिना नींद नहीं आती, पापा के साथ खाना खाना, स्कूल जाना वह कितना मिस करता है पर वह यह बात कभी भी मम्मी–पापा से कह नहीं पाया था।उसे आज भी वह दिन याद है। कॉलोनी में दुर्गापूजा की धूम थी। पार्क में माँ की झांकी के दर्शन के लिए आस–पास के क्षेत्रों के लोग उमड़े हुए थे। नन्हा अखिल माँ के दर्शन करने के लिए परेशान था उसने पापा के कंधे पर चढ़ने की जिद्द की थी। "कैसी बातें करता है, तेरे पापा का कंधा खिसक गया तो आफत हो जाएगी।" माँ ने कहा था पर पापा तो पापा ही ठहरे।

"पापा कितना साफ और अच्छा दिखाई दे रहा है।" पापा ने अपने कंधे की परवाह न करते हुए उसे बैठा लिया था। "मेरे कंधे पर बैठकर तो तुझे सारी दुनिया देखनी है।मेरे सपनों को पूरा करना है। जो मैं नहीं कर सका वह सब तुझे करना है।'

अबोध अखिल पापा के बातों को समझने का प्रयास कर रहा था और उनके पीछे छिपे कारणों को समझने की कोशिश कर रहा था। माँ ने कितनी बार कहा था, "तेरे बाबा की इच्छा थी कि तेरे पापा एक बेहतरीन इंजीनियर बने। शहर की प्रसिद्ध कोचिंग में दाखिला भी करवाया पर पापा का मन तो सिर्फ किताबों में लगता था। किताबें ही उनकी दोस्त थीं उन्होंने टीचिंग लाइन चुनी। उन्हें इस बात का मलाल जीवन भर रहा कि वह बाबा के सपनों को पूरा नहीं कर सके।"

पापा ने अपने सपनों की बैसाखी अखिल को पकड़ा दी थी उन्होंने एक बार भी नहीं सोचा अखिल क्या चाहता है? आखिर उसके क्या सपनें हैं। अखिल भी यह बात पापा–मम्मी से कभी कहाँ कह पाया था। पापा अखिल की आँखों से उन सपनों को देखना चाहते थे। शायद इसीलिए कम उम्र में ही उन्होंने अखिल को लखनऊ से बाहर नैनीताल के एक अच्छे से स्कूल में पढ़ने के लिए डाल दिया। शायद उन्हें लगता था वहाँ की पढ़ाई अखिल की परवरिश के लिए बेहतर होगी। अखिल उस रात कितना रोया था।

"पापा, मैं यहाँ भी मन लगाकर पढ़ सकता हूँ। मैं यहाँ रहकर भी आपके सपनों को पूरा कर लूँगा। आप ही तो कहते थे, पढ़ने वाले बच्चे हर जगह पढ़ लेते हैं।"

पर पापा ना जाने क्यों उस दिन इतने सख्त हो गए थे, वह कुछ भी सुनने और समझने को तैयार नहीं थे। शायद उसके बेहतर जीवन के लिए उनके पास इससे बेहतर कोई विकल्प नहीं था। जाते–जाते पापा ने कहा था।

"बेटा आज तुम्हें मेरी बातें समझ में नहीं आ रही पर कल जब तुम इंजीनियर बन जाओगे। तब तुम्हें अपने पापा के निर्णय पर गर्व होगा।"

स्कूल से कॉलेज, कॉलेज से इंजीनियरिंग कॉलेज फिर एमबीए के लिए एक और कॉलेज...शायद उसकी नियति यही थी। बेहतर से बेहतर सेलरी की तलाश में बेंगलुरु और दिल्ली की मल्टीनेशनल कंपनियां को बदलते–बदलते एक लंबा समय गुजर गया था। घर अब भी याद आता था, जीवन की तपिश में जब वह थक जाता तो माँ का आँचल बहुत याद आता।

इतने सालों की दौड़ से वह थक चुका था। अपने शहर की आबो हवा उसे खींचती थी। माता–पिता का उतरा चेहरा बार–बार सामने आता था।

"थोड़े साल और नौकरी और कर ले पैसे कमा लो तो तुम्हारा और हमारा भविष्य सुरक्षित हो जाएगा।"

यह कहते–सुनते दस साल बीत गए थे। जब भी घर लौटा तो घर में एक त्यौहार सा महसूस होता। दिन भर कुछ ना कुछ उसकी पसंद की चीजे बनती ही रहती। वह कहना चाहता था बस अब बहुत हो चुका, वह लौटना चाहता है हमेशा के लिए इस शहर के लिए, आप सबके लिए..और अंततः आज वह लौट आया था अपने शहर। चारबाग स्टेशन की लाल–सफेद इमारत ने उसका स्वागत किया। न जाने कितनी बार उसने इस इमारत को देखा होगा पर आज वह कुछ अलग सी लग रही थी।

"टैक्सी!"

उसने हाथ बढ़ाकर टैक्सी को रोका। "साहब कहाँ चलना है? "इंदिरा नगर चलोगे!" टैक्सी वाले ने सामान डिक्की में रखना शुरू किया। हजरतगंज–निशातगंज से होते हुए टैक्सी इंदिरा नगर की ओर बढ़ गई। लोगों की भीड़ में वह अपनों के चेहरों को ढूंढने और तलाशने की कोशिश कर रहा था। उसका अपना शहर उसने गहरी सांस ली। न जाने कितनी बार वह इन सड़कों से गुजरा होगा पर आज इन सड़कों से होकर जाने में जो आनंद आ रहा था उसके लिए उसके पास शब्द नहीं थे।

"ममता की छाँव" गेट पर संगमरमर के पत्थर पर उकेरे गये सुनहरे अक्षरों में लिखा यह शब्द उसके चेहरे पर एक मुस्कान छोड़ गया।

"बस यही रोक देना।" उसने टैक्सी वाले से कहा, अब उसे इस शहर, इस घर और इस घर के बाशिंदों से दूर जाने की जरूरत नहीं यह सोचकर वह रोमांचित हो उठा। उसने दरवाजे का कुंडा जैसे ही हटाया,

"खट्ट..."

एक जानी–पहचानी सी आवाज हुई। पापा की आवाज अंदर से आई।

"कौन है ?"

दरवाजे के खोलते ही अखिल को अपने सामने देख पापा आश्चर्य में पड़ गए। "अरे अखिल तू! सब ठीक है न..." उन्होंने झट से अपना हाथ अखिल के माथे से लगाया। "तबीयत तो ठीक हैं न तेरी!"

"जी..." पापा समझने की कोशिश कर रहे थे "यूँ अचानक कैसे? सब ठीक है न... तेरी फ्लाइट का समय तो यह नहीं है।क्या कोई नई फ्लाइट चलने लगी है तूने बताया नहीं कभी!"

"पापा इतना सामान लेकर मैं फ्लाइट से कैसे चलता। मैं ट्रेन से आया हूँ।" टैक्सी वाले ने एक–एक करके सामान बाहर कार से निकाल कर गेट पर रख दिया। अखिल को यूँ अचानक सामने देख पापा इतना हड़बड़ा गए थे कि उनका ध्यान उन सामानों पर गया ही नहीं। पापा की आवाज सुन मम्मी भी घर से बाहर निकल आईं।

"अरे अखिल तू कब आया?" "बस अभी..." अखिल ने माँ के पैर छूते हुए कहा "सारी बातें यही कर लेंगे कि बेटे को अंदर भी आने देंगे।"

माँ ने बात को संभालते हुए कहा पर पापा के चेहरे पर उभरी हुई चिंता की लकीरें अभी भी स्पष्ट देखी जा सकती थी। अखिल अपने कमरे में पहुँचा, कमरे की दीवारें आज भी वैसे ही उसका स्वागत कर रहीं थीं। अखिल ने राहत की सांस ली। पापा धीरे–धीरे करके बाकी सामान अंदर ले आए। मम्मी ने पापा को इशारा किया, कि बाद में बात की जाएगी।

"तू बहुत थक गया है, जाकर आराम कर ट्रेन में वैसे भी नींद नहीं आती।" अखिल वाकई में बहुत थका हुआ था। यह थकावट सिर्फ तन की नहीं थी मन की भी थी। इतने दिनों के मानसिक संघर्ष के बाद आज वह निर्णय ले पाया था। वैसे भी इस वक्त वह बात करने के मूड में नहीं था।वह नहीं जानता था कि उसके इस तरह से हमेशा के लिए वापस आ जाने पर मम्मी–पापा क्या प्रतिक्रिया होगी।

समय तेजी से बीत रहा था, अखिल को आए हफ्ता भर बीत चुका था। अखिल ने पहली बार उसके आगमन पर घर में बेचैनी महसूस की थी। कल रात अखिल ने महसूस किया था, दरवाजे के बाहर पापा की परछाई ठहर गई थी। वो शायद कुछ कहना चाहते थे, पर उनके कदम वापस लौट गए। कमरे की दरार से आती रोशनी में अखिल ने सिर्फ उनकी छाया देखी थी, चेहरा नहीं।

अखिल ने मम्मी–पापा को अभी तक कुछ भी नहीं बताया था। मम्मी–पापा भी उसके बोलने के इंतजार में उससे कुछ भी पूछ नहीं रहे थे पर खलबली दोनों तरफ मची हुई थी। एक दिन वह अपनी मेज पर बैठा लोकल अखबारों में अपने लिए नौकरी ढूंढ रहा था। लाल रंग के स्केच पेन से अखबार पर उसने कई घेरे बनाए हुए थे। तभी मम्मी कॉफी का एक मग लेकर उसके सामने आ गईं।

"क्या लिख रहा है?" "कुछ नहीं मम्मी..." उसने अखबार को पलट कर रख दिया। कमरे में सन्नाटा पसर गया, माँ ने ही बात शुरू की। "इस बार लंबी छुट्टी लेकर आया है?" अखिल चुप था, मम्मी उसके जवाब का इंतजार कर रही थी।

"ऊपर से इतना सारा सामान भी लाया है!" सन्नाटा, माँ ने हिम्मत नहीं हारी "बॉस ने कुछ कह दिया है ? नौकरी है यह सब तो लगा रहता है ।"

"माँ, मैं हमेशा के लिए दिल्ली छोड़कर आप लोगों के पास आ गया हूँ।" "क्यों!ऐसे, ऐसे नौकरी छोड़कर कौन आता है?" पापा कमरे के बाहर पर्दे के पीछे चुपचाप खड़े थे पर उनकी परछाईं साफ–साफ महसूस की जा सकती थी। शायद आज दोनों ने यह तय कर लिया था कि वह अखिल से उसके यूँ अचानक आने का कारण पूछ कर रहेंगे।यह जिम्मेदारी मम्मी ने उठाई थी।

"बोलो अखिल, मैं कुछ पूछ रहीं हूँ।" मम्मी के चेहरे पर नाराजगी थी वैसी ही नाराजगी जब बचपन में नंबर कम आने पर मम्मी के चेहरे पर दिखती थी। आज मम्मी का वह रूप बहुत दिनों बाद दिखाई दिया था। माँ के चेहरे पर अपनी बेटे के वापस आने की खुशी नदारद थी। अखिल असमंजस में था, क्या वह गलत सोच रहा है ! क्या माँ उसके आने से खुश नहीं थी। "मम्मी दिल्ली की भाग–दौड़ से मैं ऊब चुका हूँ ,अब आराम से रहना चाहता हूँ। वैसे भी आप दोनों को छोड़कर रहने का अब मन नहीं करता। मुझे यहाँ भी नौकरी मिल जाएगी, इतने सालों का एक्सपीरियंस भी तो है।"

माँ के चेहरे पर कई भाव तेजी से आ और जा रहे थे। "मिल जाएगी! छोटे शहरों में नौकरियाँ रखी कहाँ हैं?" मम्मी की आवाज में हताशा थी। अखिल ने आश्चर्य से मम्मी को देखा जो माँ उसकी बलाएं लेते नहीं थकती थी उसकी एक छींक पर घबरा जाती थी, वह अपने बेटे के वापस आने पर खुश क्यों नहीं थी। अखिल एकटक मम्मी को देख रहा था। शायद मम्मी को अपनी गलती का एहसास हुआ। उन्होंने बात संभालते से कहा "अखिल अभी तो तुम्हारा सारा जीवन पड़ा है। हमारी तो जैसी गुजरनी थी, गुजर गई पर तुम, तुम हमारे लिए अपना जीवन क्यों बर्बाद कर रहे हो! वैसे भी अभी तो बहुत सारे सपने पूरे करने हैं।"

मम्मी लगातार बोलते जा रही थी "पापा अभी पिछले हफ्ते ही कह रहे थे, अपनी कार बहुत पुरानी हो गई है। अखिल से कहकर एक नई कार ले लेते हैं। धीरे–धीरे उसकी तनख्वाह से ई एम आई कटती रहेगी। ऊपर वाले पोर्शन को बनवाने के समय जो लोन लिया था वह भी तो अभी तक पूरा कटा नहीं है और अभी तो तुम्हारी शादी भी करनी है। वह सब खर्च कैसे पूरे होंगे! पापा की कमाई तुमसे छुपी नहीं हुई है, मैं पापा से कहकर कल का ही तुम्हारे एयर टिकट करवाती हूँ। वापस जाओ और नौकरी ज्वाइन करो।"

"पर माँ!" माँ जा चुकी थी। अखिल उन्हें जाता हुआ देख रहा था। वह अपने आप को पहले से भी ज्यादा अकेला महसूस कर रहा था। जिस अकेलेपन को दूर करने के लिए वह वापस अपने शहर, घर और अपनों के पास आना चाहता था वह तो कहीं थे ही नहीं, वह अब पहले से ज्यादा अकेला था। वह समझ नहीं पा रहा था गलत कौन था वह... मम्मी... या फिर वक्त...

वह कहना चाहता था माँ अब बहुत दौड़ चुका, अब लौटना चाहता हूँ तुम्हारे पास...तुम तो हमेशा कहती थी कि क्या रखा है उस शहर में वापस आ जा। मैं आना चाहता हूँ तुम्हारे पास, एक बार फिर कह दो न कि क्या रखा है उस शहर में वापस आ जा न...कॉफी ठंडी हो चुकी थी, उसके अरमानों की ही तरह।

उसने कमरे की दीवारों को एक भरपूर नजर डाली। एक पल को लगा वो दीवारें भी उसे अपरिचितों की तरह देख रहीं हैं। उसका दम घुटने लगा, वह घबराकर कमरे से बाहर आ गया। गेट के सामने लगा सेमल का फूल अपने खोल को छोड़ धुआं हो चुका था ठीक उसके सपनों की ही तरह...सेमल के पेड़ ने पत्तों को तज दिया था। एक पत्ता हवा के साथ बहता हुआ उसके पैरों के पास आकर गिर गया। अखिल सोच रहा था न जाने कितने दिनों तक यह पत्ते इस पौधे के साथ रहे पर एक पतझड़ में पेड़ ने पत्तों का साथ छोड़ दिया। उसके जीवन में भी तो पतझड़ आकर रुक गया था और वह जर्रा–जर्रा होकर अपनी जड़ों से अलग हो रहा था। घर के भीतर से आती टिक–टिक घड़ी की आवाज अब भी वैसे ही थी। वो रुक गया था, रुकना चाहता था। बस वक्त रुकने को तैयार नहीं था।

उसने पलट कर घर को एक बार फिर देखा, शायद! शायद यह घर ही रोक ले पर शायद उसको भी अखिल के बिना रहने की आदत पड़ चुकी थी। काश! काश कोई तो कहता रुक जाओ जाना जरूरी है क्या... ◆

पता : लाल बाग कॉलोनी, छोटी बसही, मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश–231001

मो. : 9415479796

कविता

बेटी के अरमान

रविन्द्र सिंह पंवार

तेरे आँगन की मैना हूँ मैं बाबुला, पंख दे दे मुझे मैं उडूं अर्श पर।
खुश रहूँ में सदा तुझको खुश देखकर, प्यार दे दे मुझे मैं उडूं अर्श पर।।

तेरी गोदी में सुख–चैन पाया सदा, तेरे कंधों का निर्भय सहारा मिला।
तूने हर पल बचाया मुझे आग से, प्रेम सरिता का शीतल किनारा मिला।।
मेरी नैया का पतवार तू बाबुला, दे मुझे हौसला मैं उडूं अर्श पर।। तेरे आँगन....

तपती गर्मी में छाया तेरे प्यार की, शीत ठिठुरन से रखा बचाकर मुझे।
बोलने की भी तूने ही तौफीक दी, पहला अक्षर वो 'पापा' सिखाकर मुझे।।
तेरी आँखों में रहमत बरसती सदा, बूँद दे दे मुझे मन उडूं अर्श पर।। तेरे आँगन..

मेरे जीवन की बगिया का माली है तू, मेरा हर नाज तूने उठाया सदा।
खुद गिरा किन्तु मुझको न गिरने दिया, राह भटकी तो तूने बचाया सदा।।
मैं खिली तेरे उपकार की छाँव में, रंग दे दे मुझे मैं उडूं अर्श पर।। तेरे आँगन....

आज रस्मों की दहलीज पर आ गयी, तेरी यादों की सौगात है साथ में।
भूल सकती नहीं मैं तुझे बाबुला, मौत तक तेरी हर बात है साथ में।।
तेरी उम्मीद को मैं निभाती रहूँ, प्यार दे दे मुझे मैं उडूं अर्श पर।। तेरे आँगन...

◆

पता : D–1/216, संगम विहार, नई दिल्ली–110080
मो. : 9810318136

चांद बालियाँ

आशिया अफरोज 'आशी'

सपने को अपने
छोड़ कर
ख्वाहिशों को
मार कर
नये सपने
के लिए
नयी ख्वाहिशों
के लिए
बहुत कुछ
सोच कर
दिल को
मसोस कर
बेटे का मुंह
देख कर
कहां रहा
ध्यान अपना
सब कुछ
भूल कर
एक पल
ठिठक पड़ी
खुशी–खुशी
उछल पड़ी
निकाल लायी
आलमारी से वो
पहन कर
कभी संवरती थी
मां की निशानी को
उसी तरह
समझती थी
नयी उम्मीदों
की खातिर
नये ख्वाबों को संजोने
के लिए
बेच आई वो
आज अपनी
चांद बालियाँ

◆

पता : सरोजनीनगर, बिजनौर, लखनऊ
मो. : 9721856191

सूरज कहूँ या चाँद

अमित कुमार

सूरज कहूँ या चाँद या फिर झरनों का मधुरिम अनुनाद
पर कुछ भी हो तू औरों से अलबेला है
तेरे अन्दर पलते चम्पा–चमेली और बेला हैं
कितने रंगों से तूने जीवन को खेला है
फूल कहूँ या फूलों का राजकुमार,
पर औरों से बिरला है तू एक यार
बसता तुझमें न जाने जगती का कितना प्यार
तू नहीं हारा, मैं गया तेरे आगे हार।
मधुर, मधुरिमा या कोयल सी तेरी आवाज
शायद अब तक परख रहा हूँ मैं आज
तेरे आगे फीके सब यारों के ताज
तू कुछ का ही बनता क्यों सरताज?
आँखे हैं या नीलम सी मधुरिम गहराई का आँचल
क्यों नहीं बतला पाया तू मुझको किसी पल
तू यूँ ही वक्त का गुनहगार हो गया
मुझसे दिल तोड़ दूर जाने को तैयार हो गया।
पर, मैं तुझको क्या कभी पाया हूँ भुला
ये तो शायद ही तूने जानना चाहा होगा
बदलते सफर में बदल जाते है लोग इस कदर
मुझसे न जाना जाता होगा,
यूँ तो पहले तूने मुझे कितना चाहा होगा
पर विश्वास पुराना भूल, आज क्या नया इतिहास लिखेगा?
तेरी यादों के आंचल में मैं मायूस भी इतना हो जाऊँगा,
ऐसा भी था कुछ पता नहीं,
जाने से पहले और जाने के बाद,
दिया क्यों मुझे तूने अपना हाल–पता नहीं...........।

◆

पता : 32, एच.पी. एक्सटेंशन, निकट–DMS शॉप
एंड्रयूजगंज, नई दिल्ली–110049
मो. : 7042607849

यह इमारत

डॉ. रविशंकर पांडेय

गुल खिलाने लगी
कच्ची ईंट की
कोई शरारत
फिर दरकने सी
लगी है यह
करोड़ों की इमारत !

नींव के पत्थर
बहुत से नींव में ही
धंस गए हैं
हां, नहीं के बीच
जैसे फैसले सब
फंस गए हैं,

लग रहे
नीचे दफन ज्यों
यहां सौ सौ महाभारत !

एक कच्ची
उमर में ही लग गया
है रोग इसको
चाहते हैं बांटना
क्यों निजी घर सा
लोग इसको,
बिन कहे सब
कह रही है
जर्द चेहरे की इबारत !

भांप करके रुख
हवा का
फड़फड़ाते हैं परिंदे
हर हुकुम पर
सर झुकाना
भूल बैठे हैं कारिंदे,

तन बदन पर
हर किसी के हो रही
हल्की हरारत!

2. खुशहाली कहां गई

कहां गए मेल–ठेले
खुशहाली कहां गई
मस्ती में डूबी होली
दीवाली कहां गई !

तीज और
त्योहारों के रंग
लगते फीके हैं
अतिथि आज
जंजाल लग रहे
अपने जी के हैं,
वह परंपरा लम्बी
पोसी पाली कहां गई !

चौपालें खाली
घर भर के
सूने कोने हैं
मुंह लटकाए
चेहरे सबके
लगते रोने हैं,

आंखों की
वह चमक, गाल की
लाली कहां गई !

सरसों नहीं
खेत में फूली
सत्यानाशी है
खेतों
खलिहानों में
गहरी एक उदासी है,

हरी धनखरी
बीच लरजती
बाली कहां गई !

3. तुम्हें देखकर

तुम्हें देखकर
मन में जैसे
एक महाभारत होता है !

तुम चलती हो
एक हंसिनी संभल संभल
ज्यों डग भरती है
पारिजात की
टहनी जैसे हल्की
जुंबिश से झरती है,

बंधी झील के
जल में कोई ज्यों
बरबस लहरें बोता है !

घर आंगन में
बिखरी हो तुम ज्यों
गेंदे की पीली पंखुरी
अथवा छिड़क गया
है कोई अक्षत हल्दी
भर भर अंजुरी,

पावन पावन
जैसे कोई
गंगाजल से घर धोता है!

तुम्हें देखकर
लगा कि कोई
इंद्रजाल का मंत्र पढ़ गया
ज्यों कबीर की
काली कामर पर
केशव का रंग चढ़ गया,

तेरे रूपकुंड पर
रह रह लगा रहा
मन क्यों गोता है !

◆

पता : 5/246, गोमतीनगर विस्तार,
लखनऊ–226010
मो. : 9140852665

हरी चींटियाँ सपना देखती हैं

❑ सूर्यकांत शर्मा

संस्मरण एक ऐसी सशक्त विधा है जिसमें व्यक्ति विशेष, स्थिति विशेष या दोनों का ही सूक्ष्म से सूक्ष्मतर स्तर तक का गहन गंभीर विश्लेषण, एक रोचक और विशिष्ट अंदाज ए बयां से विभूषित होता है। वस्तुतः संस्मरण हमें व्यक्ति विशेष की वृत्ति प्रवृत्ति, और घटित हुए घटना या अनुभव का आईना होता है। इस आईने में, संस्मरण लेखक आप बीती और जगबीती का अनुभव प्रस्तुत करता है जो रोचक, कौतूहल पूर्ण, और नव रस से परिपूर्ण और एक संदेश में देता है। पाठक सोच रहे होंगे कि संस्मरण पर कोई अनुसंधानित विवेचना की भूमिका है, जी नहीं, ऐसा कतई नहीं है, वरन पद्मश्री और साहित्य अकादमी विजेता और हाँ! जीवन के नब्बे वसंत देख चुकी सुप्रसिद्ध पंजाबी की जानी–मानी लेखिका अजीत कौर की नई पुस्तक– "हरी चींटियाँ सपने देखती हैं", प्रकाशित हुई है की चर्चा है। उन्हीं की संस्था द्वारा वर्षों से सतत 'डायलॉग प्रोग्राम' के अंतर्गत इस पुस्तक का लोकार्पण हो चुका है। बात फिर संस्मरणों की!!! यह समीक्षा पुस्तक एक अमूल्य थाती है जो आजाद भारत से पहले अविभाजित भारत और उसके बाद से अद्यतन एक लंबे कालखंड की यात्रा प्रस्तुत करती है और पाठक उस समय के कालखंड के साथ ही उस दौर के और कुछ का दौर आज भी जारी है....उन सेलिब्रिटीज यानी विभूतियों के अंदर तक झांक कर, एक अनुभव दर्पण प्रतीत करती है। यह पुस्तक गुरुमुखी भाषा से अनुवाद कर, हिंदी में लिखी गई है। इसका अनुवाद 'भूपेंद्र कौर प्रीत' ने किया तथा पुस्तक का आवरण चित्र, श्रीमती अजीत कौर की सुपुत्री 'डॉ. अपर्णा कौर' ने सृजित किया है। अनुवादक और इलस्ट्रेटर यानी चित्रकार अपने अपने क्षेत्रों में जाने–माने

हैं। डॉक्टर अपर्णा कौर, एक लब्ध प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय स्तर की चित्रकार हैं और इनकी कृतियों की धूम है और इनकी कृतियां विशिष्ट स्थानों से लेकर घरों में भी स्थान बना चुकी हैं। अनुवादिका ने भी हिंदी भाषा के अनुसार ही अपनी कलम से अनुवाद की महता को साबित किया है। अब बात करते है, समीक्षित पुस्तक की। यह संस्मरणों की आकाशगंगा बहुत से सुने–अनसुने प्रसंगों के साथ–साथ कुछ लब्ध प्रतिष्ठित व्यक्तित्वों को अंदर तक झांक कर, उनके जीवन के अनछुए और ऐसे पहलुओं को सामने रखती है कि पाठक समीक्षक संपादक सब हैरान होने की स्थिति में आ सकते हैं। इस संस्मरण का आरंभ मशहूर गजल गायक 'जगजीत सिंह' से, शीर्षक– 'गजल का बादशाह' से होता है। बकौल अजीत कौर, जगजीत सिंह और चित्रा सिंह को आधार देने हेतु अभिनय के काल जयी शहंशाह स्वर्गीय दिलीप कुमार को फोन किया, "यूसुफ भाई आपके शहर का एक लड़का है जगजीत सिंह। बहुत अच्छा गाता है। अपनी बीवी चित्रा के साथ। उसे कोई नहीं जानता। वह एक बड़ा सिंगर बन सकता है। यूसुफ भाई! यह एक प्रार्थना थी उस समय के कला स्तंभ से, अजीत कौर के ही शब्दों में, जिसमें वे दिलीप कुमार साहब से गुहार सी लगा रही है– 'एक आप ही हैं जो मुझे बचा सकते हैं और जगजीत सिंह को भी। अगर आप आ जाएं और हम बड़े–बड़े बैनर लगा दें कि फिल्मों की दुनिया के बादशाह दिलीप कुमार आ रहे हैं तो हॉल क्या सड़कें भी भर जाएंगी। एक काबिल लड़का संगीत की दुनिया में स्थापित हो जाएगा। मैं कसम खाती हूँ। वो बहुत अच्छा गाता है।" वहीं अभिनय के सरताज का कथन "बहुत अच्छा अजीत बहन आ जाएंगे भाई।" अब दुआ और मेहनत का निवेश हुआ कि जगजीत सिंह जी एक सितारा बन गए। लेकिन दुनिया की रीत से, गजल गायक स्वर्गीय जगजीत सिंह भी, अलग नहीं चले और प्रसिद्धि के रास्ते पर उन्होंने अजीत कौर जी के अमूल्य सहयोग को कभी सार्वजनिक रूप से नहीं स्वीकारा। उसे भुला आगे और आगे चलते चले गए...

ऐसा ही एक और दिलचस्प किस्सा है। यह संस्मरण मशहूर उस्ताद अल्ला रख्खा के दामाद से जुड़ा है। अजीत कौर ने उनसे, एक कैसेट के रिकॉर्डेड आवाज, जिस गायिका की थी, उसे खोजने का निवेदन किया था। उस आवाज की खोज, नूरां पर जाकर समाप्त हुई। दरअसल यह किस्सा, नूरां और गुरदास मान का है, जिसमें गुरदास मान का अंश तो किसी हद तक स्वीकार्य है। लेकिन नूरां जी वस्तुतः सर्वहारा वर्ग की महिला थीं और अजीत कौर के सहयोग से वे एक चोटी की गायिका बनीं। दुनिया ने उन्हें सर आँखों पर बिठाया। लेकिन जब नूरां को पहली बार बुलाया गया तो कौरजी के शब्दों में, "काली–कलूटी, सूखी, छोटे कद की, झुरियां वाली चमड़ी, छोटी सी चोटी में से निकलते बाल, मैले–कीचड़ कपड़े। गोद में मैला सा हारमोनियम उठाये हुए। उसका बेटा कोई 16–17 वर्ष का होगा। मैले कपड़े, घबराया हुआ, गोद में ढोलकी उठाई हुई। या खुदा! इन दोनों को इसी तरह स्टेज पर कैसे बिठाया जा सकता है...? नूरां और उसके बेटे को नहलाने धुलाने, कंघी करने, कपड़े बदलने में, अपर्णा की सलवार कमीज उधेड़ कर छोटी करके, पहनने में, चाय और परांठे खिलाने में, काफी समय लग गया।" इतने कड़े परिश्रम के बाद उसे स्टेज पर प्रस्तुत किया गया और दर्शकों ने उसकी गायकी को सराहा। तत्पश्चात वह भी शोहरत और पैसे की सीढ़ियाँ चढ़ गई और कभी भी अजीत कौर की इस मदद का कोई खुलासा नहीं किया। सजीव संस्मरणों की यह पुस्तक पाठकों को एक से एक विख्यात विभूतियों के बारे में बताती है, उदाहरण के तौर पर शाहरुख खान। स्वर्गीय धीरू भाई अंबानी, सरदार प्रीतम सिंह, अमृत कौर उर्फ अमृताप्रीतम, इमरोज और अंतिम मुगल बादशाह को शायरी सिखाने वाले स्वर्गीय शेख इब्राहिम जौक। इन सभी की पड़ताल और चौंकाने वाले खुलासे इस पुस्तक की थाती हैं।

पाठक इस किताब को पढ़ कर वास्तविकता से दो–चार होंगे तो बहुत सी अजीम्मुश्शान हस्तियों के शीशमहल, न केवल टूट जाएंगे वरन् उनका आत्म केंद्रित व्यवहार और फितरतें सामने आएंगी और 'चारण साहित्य' या ऐसे ही सिने–लेखक और विशेष रूप से आम युवा–पाठक चौंक उठेंगे। पुस्तक के आरंभ के पृष्ठों में अजीत कौर, मिलवाती हैं 'बादशाह खान से।' दूरदर्शन में उनकी लिखी कहानी 'दूसरा केवल' हेतु ऑडिशन चल रहे थे। सैकड़ों युवा लड़के–लड़कियों में शाहरुख खान भी अपनी किस्मत

आजमाने हेतु खड़े थे। यकायक अजीत की नजर इन पर पड़ी और इन्हीं के शब्दों में "भीड़ में एक चेहरा बहुत अच्छा लगा। पर न उसका कद–काठ था ना बदन गदराया हुआ था, न ऊँचाई ठीक थी। शायद 3–3 इंच की हील वाले बूट पहने हुए था। परंतु उसके गालों में डिम्पल पड़ते थे। मैंने टंडन साहब को बताया कि यहां एक लड़का खड़ा है। छोटा सा सूखा–सड़ा सा है, और कोई खासियत नहीं है उसमें, लेकिन उसके गालों बहुत सुंदर गड्ढे पड़ते हैं।" टंडन साहब ने कहा कि "डिम्पल से नहीं बनती फिल्में। डूबना है मैंने?" मैंने कहा, "एक बार उसे बुलाकर बात करके तो देख लो। आगे आपकी मर्जी।" मैंने जाकर उसकी बाजू पकड़ी और उसे टंडन साहब के पास ले आई। उसने हाथ जोड़कर नमस्ते की, गड्ढे पड़े। "नाम क्या है तुम्हारा?" टंडन साहब ने पूछा, "जी शाहरुख खान। गड्ढे पड़े। "पहले किसी थिएटर में काम किया है?" "जी स्कूल कॉलेज में कभी–कभी" और गड्ढे पड़े। 'दूसरा केवल' सीरियल में इनका छोटा सा रोल, इन्हें 'फौजी सीरियल' कामयाबी के रोलर कोस्टर पर ले गया। तिस पर भी बीबी अजीत कौर की मुताबिक, फिल्म इंडस्ट्री के बादशाह ने कभी इनका शुक्रिया या जिक्र तक नहीं किया। यह सिलसिला आगे विख्यात बिजनेस व्यक्तित्व धीरू भाई अंबानी पर केंद्रित हुआ और सोवियत संघ पर केंद्रित पत्रिका–रूपी अंक पर 'विशेष कपड़े की कतरनें', जो धीरू भाई अंबानी का उत्पाद और मैडम की पसंद थीं। उन्हें सजावटी अंदाज में टांक कर रूस भेजा गया और कतरनें पसंद आना, फिर थोक ऑर्डर–दर–ऑर्डर..., अंबानी साहब का व्यापारिक परिदृश्य पर छा जाना। यहाँ फिर वही, कोई जिक्र ना होना। पुस्तक का सबसे बड़ा और अहम खुलासा, 'अमृत कौर' यानी 'अमृता प्रीतम' पर है। इसमें किए गए खुलासे, पाठकों के लिए, इस महिमा मंडित साहित्यकार को कम से कम यथार्थ के धरातल पर तो खड़ा ही कर देंगे। जफा कितनी हसीन और अवास्तविक हो सकती है, ठीक रील और रियल यानी यथार्थ की मानिंद इसका जीता जागता उदाहरण हैं ये संस्मरण!!? किस्से की शुरुआत लाहौर में अविभाजित भारत के समय से शुरू होती है। अमृत कौर के परिवार की बात से और उनके पति सरदार प्रीतम सिंह तथा उनके पिता की दरियादिली से। अमृता प्रीतम का टीबी से ग्रस्त होना, उनके पति और ससुर का लाखों रुपए खर्च कर अमृता के जीवन को बचाना, विभाजन विभीषिका को झेल कर दिल्ली में पुनः व्यवसाय करना। पटेल नगर–दिल्ली के मकान में फिर से अमृत कौर का अपना आत्मकेंद्रित, लेखकीय जीवन शुरू करना। 'डॉ देव' उपन्यास के सिलसिलेवार प्रकाशन होने के दौरान इमरोज का घर में आना और सरदार प्रीतम सिंह का इसे खुले और स्वस्थ मानसिकता से स्वीकारना। बाद में इमरोज को बासु भट्टाचार्य से मुंबई में काम मिलना, अमृत कौर का ऐलान करना कि मुझे इमरोज से इश्क है और फिर उसके साथ चले जाना..., एक वर्ष बाद पुनः प्रसिद्ध लेखक बलवंत गार्गी के घर, दिल्ली आना और सरदार प्रीतम सिंह का पुनः चुपचाप घर वापिस ले जाना मय इमरोज! प्रीतम सिंह के परिवार को आपत्ति थी, लेकिन उनके पति का सहृदय व्यवहार। यहीं पर अजीत कौर जी ने, प्रीतम सिंह जी पर एक अध्याय लिखा है, 'अलविदा फकीर दरवेश।' अमृत कौर मिले साहित्य अकादमी अवॉर्ड, के पांच हजार रुपए से, हौजखास में प्लॉट खरीदना और मकान बनाने हेतु अपने पति से उनकी पारिवारिक संपत्ति में हिस्सा लेने को कहना और लड़–भिड़ कर मकान बनाना। इमरोज के साथ अलग कमरे में रहना और पति प्रीतम सिंह की तबीयत खराब होने पर लॉन में बैठना। अजीत कौर जी का प्रीतम सिंह जी से बात करना और फिर अमृता प्रीतम से संवाद, पाठकों को पति के प्रति प्रेम और समर्पण साथ ही मशहूर साहित्यकार की पहचान बता देने में सक्षम है। साथ ही इमरोज पर 'एक वह भी था दरवेश' में सारी जानकारी दी गई है। यह लेखिका के जिम्मेदार रुख को रेखांकित करता है। लेखिका, सार्क देशों में लेखकीय और सांस्कृतिक आदान–प्रदान में जीवंत रूप से सक्रिय रही हैं। 'बातें सती कुमार के साथ,' संस्मरण जाने–माने साहित्यिक विभूति, सरदार खुशवंत सिंह को भी साथ रखती है। जगह–जगह पर सुप्रसिद्ध चित्रकार 'डॉक्टर अपर्णा' भी इस समूची पुस्तक यात्रा में साथ रही साँसों सी हैं। संस्मरण की स्वर लहरियों में अनेकानेक बीते जमाने के साहित्यकारों, आयोजकों, लेखकों के नाम सुगंधित हवा के झोंके की मानिंद आते हैं, यथा–कुँवर नारायण, केदारनाथ सिंह, वीपी सिंह, कृष्णासोबती, अमृता प्रीतम, कमलेश्वर, जोगिंदर पाल, राजेंद्र यादव, मुल्क राज आनंद, गुलाब वजीरानी, ज्ञान वाचानी। पुस्तक समीक्षा

की बात अपूर्ण रह जाएगी यदि इसमें पुस्तक के शीर्षक– 'हरी चींटियाँ सपने देखती हैं' पर बात न हो। सच्चाई तो यह है कि यह फिल्म का वाकया है। यह शीर्षक जहां "हरी चींटियाँ सपने देखती हैं" एक फिल्म का शीर्षक है, जो 'वर्नर हर्जोग' द्वारा निर्देशित है। यद्यपि लेखिका ने पुरातन संस्कृति और उनके प्राकृतिक परिवेश के बीच संतुलन को दर्शाने और रेखांकित करने का प्रयास किया है। हरी चींटियाँ एक रूपक है, जो लोगों के जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे उनके सपनों और उनकी संस्कृति से जुड़ी होती हैं। यूं भी चींटियाँ आमतौर पर मेहनत, परिश्रम और समर्पण का प्रतीक मानी जाती हैं। लेखिका ने भी अपने प्रयासों को इन्हीं चींटियों के सदृश माना है और इसीलिए अपने संस्मरणों को यह शीर्षक दिया है। इसी वर्णित तथ्य की आत्मा या गूढ़ार्थ को आत्मसात कर पुस्तक की डिजाइनर डॉक्टर अपर्णा ने इसे पुस्तक के कवर में स्थित कर उस पुस्तक को अति विशिष्ट, कला पुस्तक की श्रेणी में ला खड़ा किया है। एक और तथ्य जो अनुवाद के पक्ष में जाता है, वह यह कि पुस्तक को पढ़ते हुए यह बिल्कुल भी अहसास नहीं होता कि यह गुरुमुखी भाषा से अनूदित है। इसके लिए, अनुवादक को साधुवाद दिया जा सकता है। लेखिका अब नब्बे वर्षीय हैं सो उन्होंने एक बड़े कालखंड को सक्रिय रूप से जिया है। उसी कालखंड को उन्होंने अपने अन्य संस्मरणों में जीवंत किया है। उदाहरण के लिए, ' एक पत्र शेख फरीद के नाम', 'नया साल नई सदी मुबारक', 'सोवियत संघ की नई मीठी रेशमी धूप', 'हर्षिल : गढ़वाल का कश्मीर', 'बातें सती कुमार के साथ', 'मास्को में महिलाओं की अंतर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस', 'गांधी फिल्म : एक चमत्कार', 'पंजाब और पंजाबियत को बचाओ', 'क्रिसमस : खुशियों का त्योहार', 'इधर ही होती थी जिंदगी', 'लेखकों का मेला केरल में', 'केरल में कलाकारों का मेला', 'दास्तान डीडी'ए, 'दिल्ली में ब्रेख्त', 'सफेद रूई के पंख', 'चाय की खाली प्याली में जहर', 'जौक साहब कहां सोए पड़े हैं', 'हिंदुस्तान को ढूंढने की कोशिश', 'पहाड़ संग दोस्ती', और अंतिम दो संस्मरण जो की अमृता प्रीतम के साथ साक्षात्कार उनकी पत्रिका 'नागमणि' के लिए और सबसे अंत में सारगर्भित संस्मरण और अद्यतन वर्तमान परिदृश्य 'मेरा कमरा' पाठकों को एक अलग से एहसास से सराबोर करते हैं। संस्मरण कितनी सशक्त विधा है इस पुस्तक को पढ़ने के बाद ही, पाठक इस विधा का इंद्रधनुष देख सकता है। सार रूप में यह पुस्तक साहित्य प्रेमियों, शोधार्थियों विद्यार्थियों, साहित्यिक संस्थानों के अतिरिक्त आम पाठकों में भी अपना स्थान बनाने की क्षमता रखती है। यह पुस्तक आज के किशोरों, युवाओं महिलाओं को विशेष रूप से पढ़नी चाहिए ताकि मानव की वर्तमान फितरत और व्यावहारिकता का अंदाजा उन्हें हो और वे आजाद आत्मनिर्भर भारत के व्यावहारिक और जिम्मेवार नागरिक बनें और साथ ही साथ स्वार्थी रूमानियत की बनावट और उसके दुष्परिणामों से सचेत भी रहें। ◆

पुस्तक–हरी चींटियाँ सपने देखती हैं

लेखिका–अजीत कौर

प्रकाशक–मेधा बुक्स दिल्ली

कुल पृष्ठ–325

मूल्य–₹700

पता : मानसरोवर अपार्टमेंट, फ्लैट इ–1, प्लॉट नंबर–3, सेक्टर–5, द्वारका, नई दिल्ली–110075

मो. : 7982620596

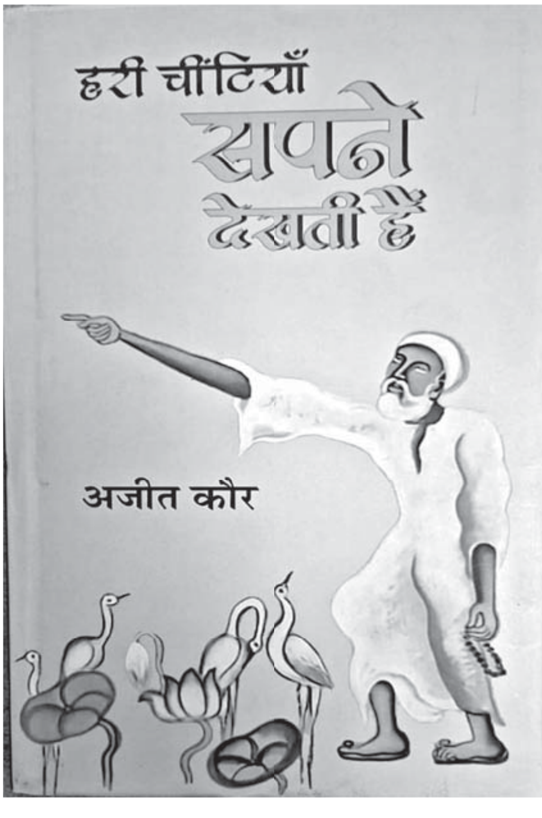

फादर्स डे

—अशोक 'अंजुम'

।। एक ।।

बेटे पर विश्वास करो यों मत घबराओ बाबूजी!
जो मन आए करो इशारा, पीयो—खाओ बाबूजी!

खूब किया है जीवन—भर ही नहीं कभी आराम किया
अब सुकून से घर पर बैठो, हुकुम चलाओ बाबूजी!

कब तक बेटों की उतरन से हर त्योहार मनाओगे
कसम आपको अब की कपड़े नये सिलाओ बाबूजी!

जिम्मेदारियों ने जीवन—भर नहीं निकलने दिया कभी
अम्मा के संग तीरथ जाओ, गंग नहाओ बाबूजी!

बोनस आज मिला है मुझको अकस्मात् ही दफ्तर से
कहां खर्च करना है इसको, जरा बताओ बाबूजी!

राग—रागिनी, आल्हा—ऊदल सब के सब बिसरा बैठे
अब फुर्सत है झूम—झूम कर ढोला गाओ बाबूजी!

कष्ट कोई हो उसे छिपाकर हरदम मुस्काते रहते,
कहां दर्द है, यूं न छिपाओ, हमें बताओ बाबूजी !

।। दो ।।

हों जो साहब जी द्वार पर बेटा
कहना डैडी नहीं है घर बेटा

मैं जो कहता हूँ तू नहीं सुनता
ध्यान तेरा है रे किधर बेटा

तेरी बीवी ने, तेरी मम्मी ने
घर को बनने न दिया घर बेटा

क्यों बुढ़ापे में मुझे लगने लगा
ये अजनबी—सा तेरा दर बेटा

जब से आई हैं बहू जी घर में
तब से निकले तुम्हारे पर बेटा

वक्त की चाल न कल रखवा दे
तेरे पैरों पे मेरा सर बेटा

सब यहाँ चर रहे हैं भारत को
तू भी मौका मिले तो चर बेटा

।। तीन ।।

डूबती उम्मीद को फिर रौशनाई दे रहा है
वो पिता के हाथ में पहली कमाई दे रहा है

चल पड़ा तो हूँ गलत रस्ते पे वैसे बेखुदी में
रोकता था तू मुझे अब तक सुनाई दे रहा है

हौसला फिर से खड़ा है लो अँधेरों के मुकाबिल
शुक्रिया मौला उजाला अब दिखाई दे रहा है

एक बूढ़े जिस्म से लाखों दुआएँ झर रही हैं
एक नन्हा हाथ मुसकाकर दवाई दे रहा है

'याद रक्खूँगा तुझे चाहे चला जाऊँ कहीं भी'
है मुझे मालूम तू क्योंकर सफाई दे रहा है

◆

पता : अभिनव प्रयास, स्ट्रीट—2, चन्द्र विहार कॉलोनी
(नगला डालचंद) क्वार्सी बायपास, अलीगढ़—202001
मो. : 09258779744

भारत सरकार के रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की रजिस्ट्री संख्या 33122/78
भारतीय डाक विभाग की डाक पंजीयन संख्या–एल.डब्लू./एन.पी. 432/2006

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रमुख प्रकाशन

उत्तर प्रदेश मासिक : समकालीन साहित्य, संस्कृति, कला और विचार की मासिक पत्रिका समूल्य उपलब्ध एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।

नया दौर (उर्दू) : सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विषय की एक उर्दू मासिक पत्रिका, एक अंक रु. 15/– मात्र, वार्षिक मूल्य रु. 180/– मात्र।

वार्षिकी (हिन्दी/अंग्रेजी) : उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के विस्तृत आंकड़ों एवं सूचनाओं का वार्षिक विवरण मूल्य रु. 325/– मात्र।

महत्वपूर्ण प्रकाशनों के लिए सम्पर्क करें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र.
दीनदयाल उपाध्याय सूचना परिसर, पार्क रोड, लखनऊ
उत्तर प्रदेश के समस्त जिला सूचना कार्यालय

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. स्वत्वाधिकारी के लिए विशाल सिंह, निदेशक, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ.प्र. लखनऊ द्वारा प्रकाशित तथा प्रकाश पैकेजर्स, लखनऊ में मुद्रित